संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित

॥ ऋषि प्रसाद ॥

वर्ष : १२
अंक : १०५
सितम्बर २००१
आश्विन मास
विक्रम.सं. २०५८

हिन्दी
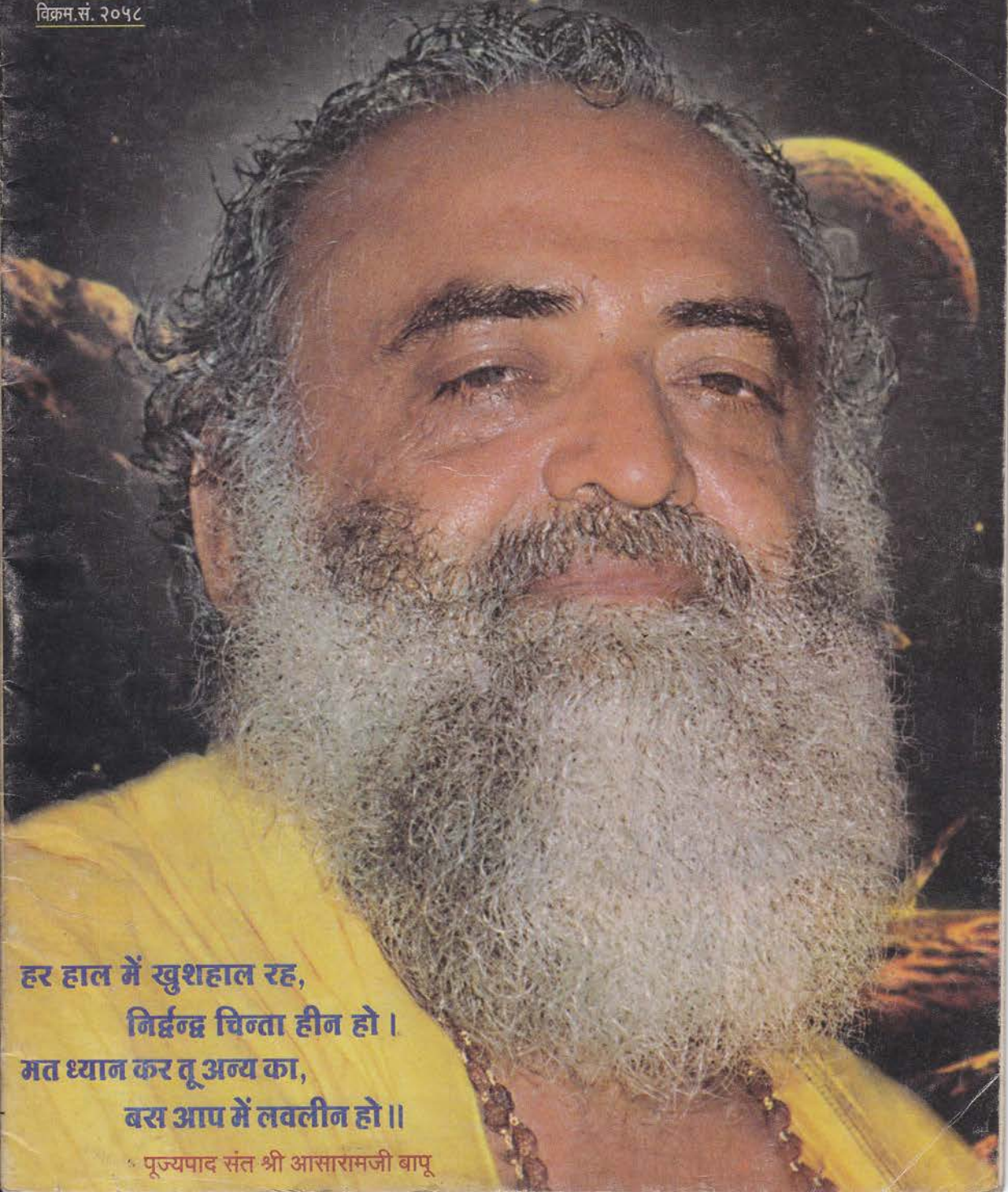
हर हाल में खुशहाल रह,
निर्द्वन्द्व चिन्ता हीन हो ।
मत ध्यान कर तू अन्य का,
बस आप में लवलीन हो ॥

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

॥ ऋषि प्रसाद ॥

वर्ष : १२
अंक : १०५
९ सितम्बर २००१
आश्विन मास, विक्रम संवत् २०५८ (गुज. २०५७)

सम्पादक : प्रे. खो. मकवाणा

मूल्य : रु. ६-००

सदस्यता शुल्क

भारत में
(१) वार्षिक : रु. ५०/-
(२) पंचवार्षिक : रु. २००/-
(३) आजीवन : रु. ५००/-

नेपाल, भूटान व पाकिस्तान में
(१) वार्षिक : रु. ७५/-
(२) पंचवार्षिक : रु. ३००/-
(३) आजीवन : रु. ७५०/-

विदेशों में
(१) वार्षिक : US $ 20
(२) पंचवार्षिक : US $ 80
(३) आजीवन : US $ 200

कार्यालय
'ऋषि प्रसाद'
श्री योग वेदान्त सेवा समिति
संत श्री आसारामजी आश्रम
साबरमती, अमदावाद-३८०००५.
फोन : (०७९) ७५०५०१०, ७५०५०११.
E-Mail : ashramamd@ashram.org
Web-Site : www.ashram.org

प्रकाशक और मुद्रक : प्रे.खो.मकवाणा
श्री योग वेदान्त सेवा समिति,
संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा, साबरमती, अमदावाद-३८०००५ ने पारिजात प्रिन्टरी, राणीप, अमदावाद एवं विनय प्रिन्टिंग प्रेस, अमदावाद में छपाकर प्रकाशित किया।

Subject to Ahmedabad Jurisdiction

अनुक्रम

पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग

SONY चैनल पर 'संत आसारामवाणी' सोमवार से शुक्रवार सुबह ७.३० से ८ एवं शनिवार और रविवार सुबह ७.०० से ७.३० संस्कार चैनल पर 'परम पूज्य लोकसंत श्री आसारामजी बापू की अमृतवर्षा' रोज दोप. २.०० से २.३० एवं रात्रि १०.०० से १०.३०

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्र-व्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक एवं स्थायी सदस्य क्रमांक अवश्य बतायें।

गुरु वंदना

गुरुदेव सुनो कर जोड़ विनय, हम शरण आपकी आये हैं।
श्रद्धा के सुमन श्री चरणों में, हम अर्पित करने आये हैं ॥टेक॥
गुरुदेव हमारे सर ऊपर, तेरी दया का हरदम हाथ रहे।
हे नाथ-अनाथ न हो जायें, तू सदा हमारे साथ रहे ॥
बिन कृपा तेरी हमने अब तक, बहुतेरे कष्ट उठाये हैं ॥श्रद्धा॥१॥
गुरुभक्ति भाव भर दो इतना, चरणों में आपके ध्यान रहे।
वैराग्य जगा दो तन मन में, धन-दौलत का न गुमान रहे ॥
अब दोष मुक्त कर दो काया, जितने भी दोष समाये हैं ॥श्रद्धा॥२॥
हो साक्षात् परब्रह्म तुम्हीं, और वेद-पुराण के ज्ञाता हो।
हे कृपा सिन्धु, दुःख भंजन तुम और जीवन मुक्ति दाता हो ॥
भवबंधन मुक्त करो सद्गुरु, यह आस जिगर में लाये हैं ॥श्रद्धा॥३॥
ना मथुरा, काशी, हरिद्वार, ना चाहत चारो धामों की।
सब तीर्थ आपके चरणों में, गर मिले धूल तेरे पावों की ॥
शिव, राम, कृष्ण ''गौतम'' तुम्ही अब आसाराम बन आये हैं ॥श्रद्धा॥४॥

- रामकिशोर सिंह 'गौतम'
शाहीबाग, अमदावाद।

*

महापुरुषों के वचनामृत

भगवद्प्राप्त महापुरुषों के वचनामृत का पान किये जा।
हर दिल में बसनेवाले आत्मदेव का ध्यान किये जा ॥
दुनियाँ फानी कुछ नहीं तेरा समय गुजरने से पहले ही।
संतों के चरणों में बैठकर ब्रह्मज्ञान का पान किये जा ॥
आत्मज्ञान पाना हो तो गुरुशरण में आइये।
भक्ति का रंग चढ़ाना हो तो गुरुशरण में जाइये ॥
जन्म आने को बीते लेकिन मुक्ति फिर भी मिली नहीं।
भवसागर से तर जाना हो तो गुरुशरण में जाइये ॥

- सुरेन्द्र शर्मा

तत्त्व दर्शन

अनंत की प्रीति

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

परमात्मा अनंत है। अनंत की प्रीति भी अनंत है। उस प्यारे अनंत की प्रीति का कोई अंत नहीं। उसके सुख का कोई अंत नहीं।

रूप प्रत्याहार सिद्ध हो गया तो देखने का इन्द्रिय सुख मिला, कहीं घूमने गये तो टहलने का इन्द्रिय सुख मिला, कुछ खाया तो रसना को सुख मिला। ये तो अंतवाले हैं लेकिन अनंत की प्रीति का अंत नहीं है। वस्तु आदि की प्राप्ति से भले थोड़ा-सा सुख मिले लेकिन सुख भोगते-भोगते सामर्थ्य क्षीण हो जायेगा। लेकिन अनंत की प्रीति का प्रसाद ऐसा है कि आदमी सामर्थ्य-संपन्न और स्वतंत्र हो जायेगा। फिर जब चाहा, जहाँ चाहा गोता मारा... और शांति, आनंद व माधुर्य...

अनंत की प्रीति करने की क्षमता सबमें छिपी है। लेकिन होता है क्या, अनंत की प्रीति का दुरुपयोग करने से अंतवाली प्रीति आ जाती है। जैसे पानमसाले में प्रीति हो गयी, हाड़-मांस के शरीरों में प्रीति हो गयी, लोभ-लालच में, रुपयों में प्रीति हो गयी। प्रीति करने की योग्यता तो है क्योंकि हम उस अनंत के अंश हैं। अनंत के अभिन्न अंश होते हुए भी प्रीति का दुरुपयोग करने से हमारी दुर्गति और विनाश होता है एवं सदुपयोग से हमारा जीवन रागरहित, चिंतारहित, वासनारहित, शोकरहित, कपटरहित और उस जीवनदाता से एकाकारतावाला बन जाता है।

उस प्रेमास्पद से प्रीति करेंगे तो जीवन में तुच्छ

चीजों का राग मिट जायेगा। रागरहित जीवन होने से मन में निर्मलता अपने-आप आ जाती है। जैसे कोई राष्ट्रपति बन जाता है तो चित्त में स्टेनोग्राफर, तहसीलदार या कलेक्टर-पद का राग नहीं रहेगा, फुटकर दुकानदार बनने का या थोक व्यापारी बनने का राग नहीं रहेगा। ऐसे ही उस अनंत की प्रीति का स्वाद चख लेने पर स्वर्ग-प्राप्ति का भी राग नहीं रहेगा और नरक का भय भी नहीं रहेगा।

अनंत की प्रीति होने से दुश्मन का डर नहीं रहेगा और मित्र में आसक्ति भी नहीं होगी। मित्र से भी अनंत की प्रीति के नाते हमारा व्यवहार होगा और सच्चा मित्र तो वही है, जिसको अनंत से प्रीति हो गयी। वही सच्चा मित्र है, वही सच्चा गुरु है, वही सच्चा हितैषी है, वही दूसरों का सच्चा सहायक होता है।

अनंत की प्रीति अनंत सुख, अनंत माधुर्य, अनंत सहानुभूति, अनंत सेवा और अनंत सामर्थ्य देने में सक्षम है। जड़भरत की बलि देनेवाले जड़भरत को पकड़ तो लाये लेकिन अनंत की प्रीतिवाले जड़भरत की बलि माँ काली कैसे स्वीकारती ? माँ काली ने बलि देनेवाले की ही खबर ले ली।

भगवान बुद्ध, संत कबीर, महावीर स्वामी, संत नरसिंह मेहता, गुरु नानकदेव और गोविंदसिंह आदि संतों के लिए लांछन लगानेवालों ने खूब लांछन लगाये। लेकिन अनंत की प्रीतिवालों के दिल में तो यह संगीत गूँजता है :

इल्जाम लगानेवालों ने इल्जाम लगाये लाख मगर,
तेरी सौगात समझकर हम सिर पे उठाये जाते हैं।

अनंत की प्रीतिवालों का प्यार अनंत होता है, अनंत की प्रीतिवालों की समझ अनंत होती है, अनंत की प्रीतिवालों का साहस अनंत होता है और अनंत की प्रीतिवाले जीते-जी अनंत के साथ एक हो जाते हैं।

जड़भरत को अनंत की प्रीति मिल गयी थी। रहूगण राजा ने उनको पालकी में जोत दिया। बेंत मारने की धमकी दी, चमड़ा उधेड़ने की धमकी दी फिर भी अनंत की प्रीतिवाले जड़भरत ने उनका मंगल ही चाहा, मंगल ही किया।

आपको अनंत की प्रीति है और आपकी कोई निंदा करता है, आपके लिए षड़यंत्र रचता है तो विचलित न हों। निंदा करनेवालों ने, षड्यंत्र रचनेवालों ने हमारे लिए भी कुछ-के-कुछ षड्यंत्र रचे, खुफिया विभाग को, आयकर विभाग को कुछ-का-कुछ लिखा। एक-दो व्यक्ति ही नहीं, कुछ चांडाल चौकड़ी के कुचक्र चलानेवालों ने मिलकर हमारा यश और वाहवाही देखकर 'सी.बी.आई.' विभाग को न जाने क्या-क्या मनगढ़ंत लिखा। कई सांसदों को मनगढ़ंत लिखा, विधायकों को और प्रशासनिक अधिकारियों को लिखा, पुलिस विभाग और दूसरी संस्थाओं को ९-९ पन्ने भरकर न जाने क्या-क्या लिखा। आयकरवाले अपना जाल बिछाकर सारी जाँच कर लेते हैं, 'सी.बी.आई' विभागवाले अपने ढंग से जाँच कर लेते हैं, सांसद और विधायक लोग अपने ढंग से लोगों से पूछताछ कर लेते हैं कि, 'क्या है ?' सारे-के-सारे लोग, जिन-जिनको भड़काया जाता है, वे ही लोग आखिर में भगत बनकर गुरुदीक्षा लेकर मत्था टेकने को आ जाते हैं।

ऐसे ही नहीं बाबाजी या बापूजी बने हैं। कई खुफिया विभाग और कई एजेन्सियाँ गहरायी से जाँच कर-करके गये। आये थे जाँच करने, अपराध खोजने लेकिन अपराध की जगह पर परमात्मशांति और अनंत की प्रीति ने उनके जीवन को भी बदल दिया।

गुरुपूनम की कतार में एक बड़े अधिकारी जैसे व्यक्ति को नजदीक से प्रणाम करने का मौका मिल गया।

उसने कहा : ''बापूजी ! मैं दिल्ली में 'सी.बी.आई' के अमुक पद पर हूँ। हम आये तो थे जाँच करने के लिए और झूठमूठ में आपके शिष्य भी बन गये। जैसी-जैसी अर्जियाँ थी, असंतुष्ट, ईर्ष्या करनेवालों ने जैसा-जैसा कुछ लिखा था, वह सब हमने जाँच किया, लेकिन हमको कुछ दूसरा ही मिला। हम तो नकली चेले बनने को आये थे लेकिन असली चेले बन गये इसलिए गुरुपूनम पर दर्शन करने आये हैं।''

ऐसे ही आयकर विभागवाले बेचारों ने भी जाँच करने के लिए कई तरह के जाल फैलाये, लेकिन यहाँ तो जहाँ जाते हैं वहाँ समितिवाले आयोजन करते हैं और समितिवाले इतने सज्जन हैं, कि तन-मन-धन से दैवीकार्य में जुड़ने का ही उनका उद्देश्य होता है। कार्यक्रम संपन्न होने पर कुछ बच जाता है तो वहाँ गरीबों की सहायता एवं भण्डारे में लगा दिया जाता है।

सचमुच आपकी में अनंत की प्रीति है तो हजारों-हजारों शिकायतें करनेवाले, हजारों-हजारों ईर्ष्या करनेवाले लोग भी बेचारे अपनी जगह पर रह जायेंगे, आपकी यात्रा चलती चली जायेगी क्योंकि अनंत की प्रीति अनंत रक्षा करती है, अनंत सहायता करती है और अनंत रस देती है। एक-दो या चार-पाँच शत्रुओं से भिड़ते-भिड़ते लोगों की जिंदगी पूरी हो जाती है लेकिन अनंत की प्रीति है तो सारा संसार विरोध में खड़ा हो जाय फिर भी अनंत की प्रीति करनेवाले महापुरुष पूजे जाते हैं।

सुकरात से ईर्ष्या करनेवाले लोगों ने कुछ षड़यंत्र रचकर जहर पिलाने की नौबत ला दी और सुकरात को संसार से रवाना कर दिया। उनका शरीर रवाना हुआ लेकिन सुकरात अभी भी साधकों और बुद्धिमानों की नजर से, महापुरुषों की दृष्टि से पूजे जाते हैं। उस समय के लोगों ने जीसस को क्रॉस पर चढ़ा दिया लेकिन जीसस को दुनिया जानती है।

नानक जी के लिए लोगों ने न जाने कितने-कितने षड़यंत्र किये, अफवाहें फैलायीं और नानक जैसे संत को जेल में डाल दिया! लेकिन अनंत की प्रीतिवाले नानक को लाखों-लाखों सरदार तो जानते हैं, करोड़ों-करोड़ों मेरे श्रोता भी जानते हैं। अनंत की प्रीतिवाले कबीरजी के ऊपर न जाने कितने-कितने लांछन लगे। वेश्याओं ने कबीरजी के हाथ पकड़े और गले पड़ीं। लेकिन आखिर वे वेश्याएँ भी बदल गयीं। विरोध करनेवालों का क्या हुआ? मुझे पता नहीं लेकिन कबीर साहब को तो तमाम संप्रदाय, तमाम मजहब के लोग और तमाम साधक एवं साधना करनेवाले लोग अभी भी नतमस्तक होकर प्रणाम करते हैं। (क्रमशः)

निरंतर यत्न करें...

❊ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ❊

योगी युञ्जीत सततमात्मानं रहसि स्थितः।
एकाकी यतचित्तात्मा निराशीरपरिग्रहः॥

'मन और इन्द्रियों सहित शरीर को वश में रखनेवाला, आशारहित और संग्रहरहित योगी अकेला ही एकांत स्थान में स्थित होकर आत्मा को निरन्तर परमात्मा में लगायें।' (गीता : ६.१०)

जिसको परमसत्य का अनुभव करना हो, वह भोगबुद्धि से संग्रह न करे। हाँ, औरों के उपयोग में आ जाय, सत्कर्म में लग जाय, इस भावना से आता है और जाता है तो ठीक है। लेकिन 'मैं इन चीजों से मजा लूँगा, बुढ़ापे में मेरे काम आयेंगी' ऐसी भोगबुद्धि से संग्रह न करे। संसार की भोगवासनाओं से अपने को ऊपर उठाता जाय। भोगबुद्धि से संग्रह न करनेवाला, आशारहित तथा मन और इंद्रियों सहित शरीर को वश में रखनेवाला, अकेला एकांत में स्थित होकर मन को निरंतर परमात्मा में लगाये तो वह परमात्मा को पा लेगा।

हम मन को परमात्मा में निरंतर नहीं लगाते थोड़ी देर के लिए लगाते हैं इसीलिए मार्ग बहुत लंबा लगता है।

कोई कहता है कि : 'मैं १९ साल से साधना करता हूँ।' लेकिन तुम १९ साल से ईर्ष्या कितनी कर रहे हो? द्वेष कितना कर रहे हो? कपट कितना कर रहे हो? धोखा-धड़ी कितनी कर रहे हो? उसको एक पलड़े में रखो और ईमानदारी से भक्ति

कितनी कर रहे हो उसको दूसरे पलड़े में रखो। फिर भी अभी तुम्हारी जो ऊँची स्थिति है, वह तुम्हारे अहंकार के कारण नहीं है, देनेवाले दाता की रहमत के कारण है।

जब अध्यात्म-प्रसाद अधिकारी को मिलता है तो बड़ी शोभा पाता है। अनाधिकारी को मिलता है तो बिखर जाता है फिर भी मिटता नहीं है। जैसे तुम तपेली में देशी घी लेने जाओ और तपेली में घी लेकर फिर दुकानदार को बोलो कि :

'नहीं चाहिए' और दुकानदार तपेली में से घी खाली कर ले फिर भी तपेली में चिकनाहट तो रह ही जाती है। ऐसे ही गुरु ने कृपा कर दी और मूर्ख शिष्य ने जहाँ-तहाँ अहंकार करके, इधर-उधर भटककर गँवा दी। फिर भी जो थोड़ी-बहुत योग्यता दिखती है वह उस तपेली की चिकनाहट की नाईं ब्रह्मवेत्ता का ही प्रसाद है।

ब्रह्मवेत्ता के प्रसाद को पूर्ण रूप से पचाने के लिए, परमात्म-ज्ञान को पाने के लिए निरंतर प्रयत्नशील रहना चाहिए। थोड़ा-थोड़ा यत्न नहीं, निरंतर यत्न हो, निरंतर प्रयास हो। उस परमात्मा को पाने के लिए एकांत में रहिये, परमात्मा का ध्यान धरिये, सत्संग करिये, मन एवं इंद्रियों सहित शरीर को वश में रखिये, आशारहित होइये एवं भोगबुद्धि से संग्रह न करिये तो परमात्म-प्राप्ति सहज हो जाती है। आत्मसुख सहज हो जाता है।

आत्मिक सुख के बिना, उस परमेश्वरीय प्रसाद के बिना कोई कितना भी खड़ेश्वरी, तपेश्वरी बन जाय, कितना भी फलाहारी, व्रतधारी हो जाय लेकिन सच्ची साधना के बिना सच्चा सुख, सच्ची शांति, सच्चा माधुर्य और सच्चा ज्ञान प्रगट नहीं होता है। सच्ची साधना क्या है ? वही, जो श्रीकृष्ण बतला रहे हैं :

योगी युञ्जीत सततमात्मानं रहसि स्थितः।
एकाकी यतचित्तात्मा निराशीरपरिग्रहः॥

सच्ची साधना से स्वरूप का ज्ञान होता है। 'ईश्वर था, ईश्वर है, ईश्वर रहेगा' यहाँ तक तो बहुत लोग जा सकते हैं। 'ईश्वर मुझसे अलग नहीं है और मैं ईश्वर से अलग नहीं हूँ' ऐसा सुनकर भी कोई कह सकता है। किंतु जिसने सच्ची साधना की है उसको अनुभव होता है कि : 'परमात्मा और मैं दो नहीं हैं। जहाँ से 'मैं' उठता है, वही आत्मा-परमात्मा है।'

दिव्यता की कमी के कारण ईश्वर दूर दिखता है, पराया दिखता है, परलोक में दिखता है। दिव्य साधना करने से दिव्य ज्ञान होता है और वह ईश्वर अपना-आपा, अपना आत्मा, अपना सोहंस्वरूप दिखता है, अनुभव होता है। इसी अनुभव को पाने का यत्न निरंतर करना चाहिए-

योगी युञ्जीत सततम्...

✲

चित्त को वश कैसे करें ?

*** संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ***

श्री योगवाशिष्ठ महारामायण में आता है कि :

''चित्तरूपी पिशाच भोगों की तृष्णारूपी विष से पूर्ण है और उसने फुत्कार के साथ बड़े-बड़े लोक जला दिये हैं। शम-दम आदि धैर्यरूपी कमल जल गये हैं । इस दुष्ट को और कोई नहीं मार सकता... हे रामजी ! यह चित्त शस्त्रों से काटा नहीं जाता, न अग्नि से जलता है और न किसी दूसरे उपाय से नाश होता है। साधु के संग और सत्शास्त्रों के विचार से नाश होता है।''

चित्तरूपी पिशाच को, मनरूपी भूत को समझाने के लिए वशिष्ठजी महाराज कहते हैं। 'शम' माने मन को रोकना, 'दम' माने इन्द्रियों को रोकना और भगवान में लगाना । इन शम-दमादि सारे सद्गुणों को चित्तरूपी पिशाच ने नष्ट कर दिया है।

इस चित्तरूपी पिशाच को शनैः शनैः वश करने का यत्न करना चाहिए। नियम में निष्ठा रखें एवं अपने को व्यस्त रखें। सत्प्रवृत्ति, सत्कर्म में ऐसे लगे रहो कि दुष्प्रवृत्ति और दुष्कर्म के विषय में सोचने का समय ही न मिले, करने की तो बात ही दूर रही।

'खाली दिमाग शैतान का घर' होता है अतः अपने को व्यस्त रखें । अपने समय का सदुपयोग करें । सत्पुरुषों के रास्ते चलें, ईश्वर के नाम का आश्रय लें। इसीसे अपना मंगल होता है, कल्याण होता है।

यह चित्तरूपी पिशाच जो जन्म-मरण के चक्कर में ले जाता है, विकारों में तपाता है वह शस्त्रों से काटा नहीं जाता, आग से जलाया नहीं जाता और न ही अन्य हथियारों से नष्ट किया जा सकता है। यह तो केवल संतों के संग, सत्शास्त्रों के विचार और भगवन्नाम के जप से ही शांत होता है और बड़े लाभ को प्राप्त कराता है।

बड़े-में-बड़ा लाभ है- आत्मसुख, हृदय का आनंद। हृदयेश्वर का बोध प्राप्त हो जाय तो फिर सुख और दुःख की चोट नहीं लगती। दिव्य ज्ञान की, दिव्य आनंद की दिव्य प्रेरणा मिलती है। अपने आत्मखजाने की प्राप्ति होने से सारे दुःख सदा के लिए मिट जाते हैं। ऐसा पुरुष स्वयं तो परमसुख पाता ही है और दूसरों को भी सुख देने में सक्षम हो जाता है।

जरूरत है तो केवल चित्तरूपी वैताल को वश करने की। ईश्वर में मन लगता नहीं है इसीलिए इधर-उधर भटकता है। जप, ध्यान, सेवा में नियम से लगता नहीं है, इधर-उधर की बातों में ज्यादा लगता है । अतः यत्नपूर्वक मन को जप-ध्यान-सेवा में लगायें। इधर-उधर के फालतू विचार आयें तो मन को कह दें : ''खबरदार ! मेरा मनुष्य जीवन है और परमात्मा में लगाना है। मन ! तू इधर-उधर की बातें कब तक सुनेगा और सुनायेगा ? एक-दूसरे के झगड़े में, टाँग खींचने में अथवा विकारों में कब तक खपता रहेगा ?''

जो अपना समय एक-दूसरे को लड़ाने में, टाँग खींचने में अथवा विकारों में नष्ट करते हैं, उनका विनाश हो जाता है। फिर वे 'कोचमैन' का घोड़ा बनकर भी कर्म नहीं काट सकते और कुम्हार का गधा बनने पर भी उनके पूरे कर्म नहीं कटते। सुअर, कुत्ता, पेड़-पौधा आदि कई योनियों में भटकते हैं

फिर भी कर्मों का अंत नहीं होता।

केवल मनुष्य जन्म में ही जीव सारे कर्मों का अन्त करके अनंत को पा सकता है। मनुष्य जीवन बड़ा कीमती है। इस कीमती समय को जो गप-शप में खर्चता है उसके जैसा अभागा दूसरा कोई नहीं है। इस कीमती समय को जो दूसरों की टाँग खींचने में या निंदा-चुगली में लगाता है, उसके जैसा बेवकूफ दूसरा कौन हो सकता है ? इस कीमती समय को छल-कपट करके अपने हृदय को जो मंद बना देता है उस जैसा आत्महत्यारा कौन ?

रक्षताम् रक्षताम् कोषानामपि हृदयकोषम्।

'रक्षा करो, रक्षा करो अपने हृदय की रक्षा करो।' इसमें मलीन विचार न आयें, इसमें छल-कपट न आये। अगर किसी कारणवश आ भी जाय तो तुरंत सचेत होकर उससे अलग हो जायें। तभी हृदय शुद्ध होगा। यदि कोई हृदय में छल-कपट, बेइमानी रखता है तो जप-ध्यान पूरा फलता नहीं है।

कोई बोलते हैं कि : 'राम-राम करेंगे तो तर जायेंगे। गीध, गणिका, अजामिल आदि तर गये, बिल्वमंगल तर गये।' लेकिन कब तरे ? जब वैश्या का रास्ता छोड़ सच्चाई से ईश्वर का रास्ता पकड़ा, ध्यान-भजन में बरकत आयी तब तरे। अजामिल 'नारायण-नारायण' करके तर गये। कैसे तरे कि बुराइयाँ छोड़कर अच्छे मार्ग पर कदम रखा, तब तरे। ऐसा नहीं कि भलाई का काम भी करते रहे और अंदर से बुराई, छल-कपट भी करते रहे ! बुराई को बुराई जानें और जो सच्चाई है उसको सच्चाई जानें।

अपनी बुद्धि को बलवान बनायें। आत्मविषयिणी बुद्धि करें, फिर मन उसके अनुरूप चले और इंद्रियाँ भी उसके कहने पर चलें। एक बार परब्रह्मपरमात्मा का साक्षात्कार कर लें फिर विकारों में होते हुए भी निर्विकारी नारायण में रहेंगे। भोग में रहते हुए भी आत्मयोग में रहेंगे। तमाम व्यवहार करने पर भी, जनक की तरह लेना-देना, राज्य करना पड़े फिर भी अंतःकरण में भगवत्-रस, भगवत्-ज्ञान, भगवत्-शांति बनी रहेगी।

एक बार भगवत्तत्त्व को पाने तक अपने चित्त की रक्षा करो, फिर तो स्वाभाविक ही सुरक्षित रहता है। जैसे एक बार दही से मक्खन निकाल दो फिर छाछ में डालो तब भी ऊपर ही रहेगा, ऐसे ही एक बार बुद्धि को इन विकारों से, प्रपंचों से ऊपर निकालकर परमात्मसुख का स्वाद दिला दो फिर बुद्धिपूर्वक संसार में रहो तो भी कोई लेप नहीं लगता। **तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता।** (गीता) उसकी प्रज्ञा परब्रह्म में प्रतिष्ठित हो जाती है।

अतः आप भी प्रयत्न करो, पुरुषार्थ करो, शाश्वत फल पाओ। प्रज्ञा को परब्रह्म में प्रतिष्ठित करके मोक्ष-सुख को पा लो। स्वर्ग भी जहाँ फीका हो जाय उस आत्म-परमात्म सुख को दाँव पर लगा कर वृद्ध होनेवाले, बीमार होनेवाले और छूट जानेवाले कल्पित शरीर के पीछे आत्मा का घात कर रहे हैं। चैतन्य-चंदन को भूले जा रहे हैं, खोये जा रहे हैं। काश ! अभी भी रुक जायें। आखिर कब तक इस नश्वर शरीर की ममता करेंगे ! शाश्वत का संगीत, शाश्वत आनंद और शाश्वत सुख को पाने के प्रयास में लगें। ॐ शांति... ॐ आंतरिक सुख... ॐ अंतरात्मा का माधुर्य-ज्ञान...

*

सत्‌शिष्यों की पावन कथाएँ अपने हृदय को जितना पावन करती हैं, हमें जितना पुण्य प्रदान करती हैं इतना पुण्य तो गंगास्नान से भी नहीं मिलता। सद्‌गुरुओं और सत्‌शिष्यों की चर्चा हमें जितना अमृत पिला सकती है इतना अमृत पिलाने की शक्ति स्वर्ग के घड़े में कहाँ है ? स्वर्ग का सुख और स्वर्ग का अमृत ऐसा कहाँ है ? सत्‌शिष्यों और सद्‌गुरुओं की गाथाएँ सुनने से, समझने से जो रस मिलता है, अमृत बरसता है वह स्वर्ग के अमृत को लज्जित कर देता है। स्वर्ग का अमृत यहाँ आकर निरर्थक सिद्ध होता है। देवताओं के अमृत को तुच्छ सिद्ध करने का सामर्थ्य सद्‌गुरु और सत्‌शिष्य की गाथाओं में समाया हुआ है।

(आश्रम की पुस्तक 'श्रीगुरुगीता' से)

श्राद्ध महिमा

[श्राद्धपक्ष : ३ से १७ सितम्बर २००१]

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

सी. डब्ल्यू. लेडवीटर ने अपनी पुस्तक 'इनविजिबुल हेल्पर्स' में लिखा है : ''हिन्दुओं में श्राद्ध की जो प्रक्रिया प्रतिष्ठित है तथा उनसे संबंधित जो विवरण हैं, वे सर्वाधिक प्रमाणिक एवं वैज्ञानिक हैं।''

सनातन धर्म यह मानता है कि शरीर के नष्ट हो जाने के बाद भी जीव का अस्तित्व नहीं मिटता है। अपने कर्म एवं संस्कारों के अनुसार वह दूसरे किसी रूप को धारण करता है। श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं :

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृहणाति नरोऽपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देही॥

''जैसे मनुष्य पुराने वस्त्रों को त्यागकर दूसरे नये वस्त्रों को धारण करता है, वैसे ही जीवात्मा पुराने शरीरों को त्यागकर दूसरे नये शरीरों को प्राप्त होता है।'' (गीता : २/२२)

वैदिक धर्म में संकीर्णता को स्थान नहीं है। यहाँ उदारता एवं व्यापकता है। जो स्वजन अपने शरीर छोड़कर चले गये हैं वे चाहे किसी भी रूप में अथवा लोक में हों उनकी तृप्ति एवं आत्मोन्नति के लिए श्रद्धा के साथ जो शुभ संकल्प एवं तर्पण किया जाता है उसका नाम है श्राद्ध।

श्राद्ध में किया गया तर्पण पितरों को कैसे पहुँचता है ? इस प्रश्न का यही उत्तर है कि जैसे भारत से भेजे गये रुपये अमेरिका में डॉलर, जापान में येन, इंग्लैण्ड में पौण्ड तथा फ्रांस में फ्रेंक के रूप में प्राप्त होते हैं उसी प्रकार हमारे द्वारा श्रद्धा से तर्पण की गयीं वस्तुएँ पितरों को उस लोक एवं शरीर के अनुसार प्राप्त होती है जिसमें वे रहते हैं।

योगी अगर प्राण को सूक्ष्म, सूक्ष्मतर, सूक्ष्मतम कर लें तो वे सूर्य, नक्षत्र और ग्रहों को उनकी जगह से हटाकर अपनी इच्छानुसार गेंद की तरह घुमा सकते हैं। स्मरण करने मात्र से देवता उनके आगे हाथ जोड़कर खड़े हो सकते हैं। आवाहन करने से पितर भी उनके आगे प्रगट हो सकते हैं और उन पितरों को स्थूल शरीर में प्रतिष्ठित करके भोजन भी कराया जा सकता है।

ब्रह्माण्ड एक समुद्र एवं प्रत्येक जीव उसमें जलकण के समान है। जिस प्रकार सागर में उठी विशाल जल-तरंग जब शांत हो जाती है तब भी उसका जल सागर में ही होता है, इसी प्रकार जीवित या मृतात्मा इस ब्रह्माण्ड में ही मौजूद रहता है।

संसार में कहीं भी युद्ध, अत्याचार एवं कष्ट हो रहे हों तो अन्य देश के निवासियों के मन में भी उद्वेग उत्पन्न हो जाता है। जाड़े और गर्मी के मौसम में प्रत्येक प्राकृतिक वस्तु ठंडी एवं गर्म हो जाती है। एक छोटे से हवन की सुवास आस-पास के वातावरण को भी महका देती है। ऐसे ही कृतज्ञता की भावना से किया गया श्राद्ध पितरों को आनंद, शांति एवं तृप्ति प्रदान करता है। हजारों मील दूर स्थित व्यक्ति ठीक नंबर डायल करने से अपने संबंधी से टेलीफोन द्वारा सम्पर्क कर लेता है। यह तो एक भौतिक यंत्र का कार्य है मंत्रशक्ति तो इससे कई गुना प्रभावशाली है। अतः उचित मंत्रोच्चार एवं शास्त्रीय विधि द्वारा किये गये श्राद्ध का हमारे पितरों को लाभ मिलता है इसमें कोई संदेह नहीं है।

श्रीरामचंद्रजी ने पुष्कर तीर्थ में अपने पिता राजा दशरथ का श्राद्ध किया था। ब्राह्मणों को भोजन परोसते समय सीताजी अचानक संकोचवश छिप गई थीं। श्राद्ध के बाद श्रीरामचन्द्रजी ने सीताजी से पूछा कि विशेष घटना के बिना भोजन परोसने की सेवा से खिसक जाना तुम्हारे लिए संभव नहीं है। इसमें जरूर कोई रहस्य है ? तब माँ सीता ने कहा कि श्राद्ध में ब्राह्मणों ने मंत्रों द्वारा ससुरजी का आवाहन किया। वे सूक्ष्म रूप से ब्राह्मण के शरीर में प्रविष्ट हुए। भोजन परोसने ससुरजी के आगे खुली घूँघट कैसे जाती ? इसलिए मैं छिप गई थी।

इस कथा को पुराणों में विस्तार से दिया गया है। यहाँ संक्षेप में ही दिया जा रहा है।

पवित्र ब्राह्मण हों और विधिवत श्राद्धकर्म कराया जाये तो स्वर्गस्थ पितरों तक पहुँचता है। श्राद्ध करने की विधि व विशेष जानकारी के लिए संत श्री आसारामजी आश्रम से प्रकाशित पुस्तक 'श्राद्ध-महिमा' पढ़ें। ऐसा पवित्र साहित्य अपने रिश्तेदारों व मित्रों में बाँटें। श्राद्ध पक्ष पर आश्रम द्वारा इस पुस्तक पर विशेष रियायत दी जा रही है।

✲

जिज्ञासा तीव्र होनी चाहिए

✽ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✽

जिसको कुछ जानना है वह भी दुःखी है, जिसको कुछ पाना है वह भी दुःखी है, जिसको कुछ छोड़ना है वह भी दुःखी है। कुछ पाना है और वह दूर है तो वहाँ जाना पड़ता है अथवा उसे बुलाना पड़ता है। कुछ छोड़ना है तब भी प्रयत्न करना पड़ता है और जानने के लिए भी प्रयत्न करना पड़ता है। लेकिन अपने-आपको पहचानना है तो न पकड़ना पड़ता है, न छोड़ना पड़ता है, न दूर जाना पड़ता है। केवल अपने-आपको खोजने का ज्ञान सुनना है।

जो अपना-आपा है उसको पाना क्या और अपने-आपको छोड़ना क्या ? अपने-आपसे दूरी भी क्या ? इतना आसान है परमतत्त्व परमात्मा का ज्ञान। लेकिन उसके लिए आवश्यक है तीव्र जिज्ञासा, अंतःकरण की शुद्धि, शिष्य का समर्पण और गुरु का सामर्थ्य... ये चीजें होतीं हैं तब काम बनता है। गुरु समर्थ हों और शिष्य भी समर्थ हो। 'बापूजी ! शिष्य समर्थ कैसे ?'

शिष्य छल-कपट, बेईमानी छोड़ने में समर्थ हो, अपनी मनमानी छोड़ने में समर्थ हो। शिष्य का सामर्थ्य है कि अपनी मनमानी छोड़ने में समर्थ हो और गुरु का सामर्थ्य है कि अनुभूति के वचन हों। शिष्य का सामर्थ्य चाहिए गुरु ज्ञान को पचाने का और गुरु का सामर्थ्य चाहिए शिष्य को देने का। शिष्य का सामर्थ्य चाहिए कि मनमुखता छोड़ सके। गुरु में सामर्थ्य चाहिए कि अनुभव को स्पर्श करके मार्गदर्शन दे सके। गुरु की कृपा और शिष्य का पुरुषार्थ... पुरुषार्थ भी कैसा ? ईश्वरप्राप्ति के लिए ही पुरुषार्थ, उसी दिशा का पुरुषार्थ। उससे विपरीत दिशा का पुरुषार्थ घाटा कर देता है। चाहिए तो परमात्मा लेकिन भटक रहे हैं इधर-उधर छोटे संग में !

वशिष्ठजी कहते हैं : 'हे रामजी ! मरुभूमि का मृग होना अच्छा है लेकिन मूढ़ों का संग अच्छा नहीं।' एकांत में आश्रम भी बनायेंगे तो संग ज्ञानी का मिलेगा कि मूढ़ों का मिलेगा ? अतः संग ऊँचा हो जिससे जिज्ञासा उभरे। जिज्ञासा बढ़े।

तीन प्रकार के लोग होते हैं : (१) तालाब में पत्थर जैसे, जब तक पत्थर तालाब में पड़ा रहता है भीगा रहता है, बाहर निकालो तो कुछ ही देर में सूख जाता है। ऐसे ही कई लोग ऐसे होते हैं जो सत्संग में आते हैं तब तक भीगे रहते हैं बाहर निकलने के बाद कुछ देर सत्संग का प्रभाव रहता है। बाद में देखो तो वैसे-के-वैसे। ब्रह्मवेत्ता के ऐसे तो करोड़ों भक्त होते हैं।

(२) दूसरे प्रकार के लोग होते हैं कपड़े जैसे, कपड़े को सरोवर में डाला, भीगा, ठंडा भी हुआ। बाहर निकाला तो पत्थर जितनी जल्दी सूखता है उतनी जल्दी नहीं सूखता, समय पाकर सूखता है। ऐसे ही कुछ होते हैं अंतेवासी, जो सब छोड़कर समर्पित होते हैं। गुरु के कार्य में भी लगते हैं लेकिन समय पाकर वे भी मनमुख हो जाते हैं।

(३) तीसरे होते हैं शक्कर के ढेले की तरह, सरोवर में डालो तो घुलमिल जाते हैं। उनका अपना अस्तित्व ही नहीं रहता, स्वयं सरोवर हो जाते हैं।

ऐसा शिष्य तो लाखों-करोड़ों में कोई विरला ही होता है। कभी कोई मिल गया ब्रह्मवेत्ता के जीवन में तो बहुत हो गया... बाकी सब तैयार हो रहे हैं, किसी-न-किसी जन्म में जागेंगे। ब्रह्मवेत्ता का अनुभव बहुत ऊँची स्थिति है। भगवान ब्रह्मा, विष्णु, महेश की बराबरी का अनुभव कोई मजाक की बात है क्या ? ईश्वर-प्राप्ति की तीव्र जिज्ञासा हो और मनमुखता छोड़ें, तब पूर्णता का सर्वोपरि, आत्म-साक्षात्कार का अनुभव होता है।

✽

अहंता और ममता

❋ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ❋

भोग और विकारों को मिथ्या जानकर जिसने अपना मन भगवान में लगा दिया, जिसने अपना मन जगत से मोड़कर जगदीश्वर में लगा दिया, उसे जगत की कोई परिस्थिति दुःख नहीं दे सकती।

'यह मेरा बेटा है, यह मेरा पिता है, यह मेरी माता है, यह मेरी पत्नी है...' इसकी अपेक्षा उनके हित की भावना रखना अच्छा है। लेकिन ममतावाली भावना दुःख देती है।

तुलसी ममता राम से समता सब संसार।
राग न द्वेष न दोष दुःख, दास गये भवपार॥

ममता रखें तो ईश्वर से रखें। किसीसे न राग करें, न द्वेष करें और दोष-दर्शन की बुद्धि न रखें। इससे चित्त निर्मल होता है और निर्मल चित्त में ही ईश्वरप्राप्ति की जिज्ञासा उठती है।

ऐसा नहीं है कि परमात्मा का साक्षात्कार हो जायेगा तो सब लोग, सब वस्तुएँ एवं सब परिस्थितियाँ सदा, सर्वत्र अनुकूल हो जायेंगी। परिस्थितियाँ तो जैसे संसार में निर्मित हैं प्रारब्धवेग से बदलती रहेंगी, लोगों के मनोभावों में भी अदल-बदल होती रहेगी लेकिन उनमें आसक्ति और ममता न होने के कारण चोट नहीं लगेगी।

अज्ञान है तो आसक्ति है और आसक्ति है तो चोट लगती है। अज्ञान नहीं है तो आसक्ति भी नहीं रहती और चोट भी नहीं लगती। एक चोट होती है कि : 'अररर... मेरा क्या होगा ? मेरा फलाना चला गया, मेरा क्या होगा ?' यह है **वासनावाली चोट।** 'बेटा चला गया, बेचारे का क्या होगा ?' यह है **ममता की चोट।** 'वह चला गया कहीं खड़िया न हो जाय, कहीं उसका पतन न हो जाय ?' यह है **करुणा की चोट।**

माता-पिता एवं गुरुजनों को ममता नहीं रखनी चाहिए, आसक्ति नहीं रखनी चाहिए। संसारी लोग आसक्ति रखते हैं। माता-पिता को अगर आसक्ति नहीं है तो ममता में आ जाते हैं। ममता नहीं, करुणा करें। **करुणा का भाव तो ठीक है लेकिन आसक्ति दुःखदायी है, ममता दुःखदायी है।**

आसक्ति होती है शरीर को 'मैं' मानकर और ममता होती है शरीर से संबंधित वस्तुओं को 'मेरी' मानकर। 'अहं' और 'मम' मिट जाय, आसक्ति और ममता से रहित हो जाय तो फिर कोई चोट नहीं लगती।

जगत की आसक्ति या देह की आसक्ति शरीर को भोगों में एवं आलस्य में गिरा देती है। आसक्ति शरीर को आलसी बना देती है, इन्द्रियों को विलासी बना देती है और मन को असंयमी बना देती है।

आलस्य नहीं, विलासिता नहीं, असंयम नहीं पुरुषार्थ हो। पुरुषार्थ अर्थात् पुरुष के अर्थ, परमात्मा के अर्थ प्रयत्न करना चाहिए। प्रयत्न भी कैसा ? **बाह्य प्रयत्न से शांत होकर भीतर कोई प्रयत्न न हो।** जैसे यहाँ तक (आश्रम तक) नहीं पहुँचे थे तो औरों की जरूरत थी। यहाँ तक पहुँच गये फिर तो यहाँ बैठना ही है, बस। ऐसे ही प्रयत्न करके बाहर के आकर्षणों से अपने को हटायें और फिर शांत होकर बैठ जायें, इसका नाम है ध्यान।

इससे इन्द्रियों का संयम, मन की प्रसन्नता एवं बुद्धि की योग्यता अपने-आप निखरती है। महामूर्ख में से महाकवि कालिदास इसी रीति से बने थे। विलासी विश्वामित्र में से ऋषि विश्वामित्र इसी रीति से बने थे। कहाँ तो भूतपूर्व विलासी राजा और कहाँ श्रीराम और लक्ष्मण दोनों भाई उनकी चरणसेवा करते हैं !

पानी नीचे की ओर बहता है लेकिन पुरुषार्थ करके उसे ऊपर चढ़ाया जा सकता है। पंप लगाओ तो पानी ऊपर चढ़ जायेगा। पानी का स्वभाव ही है नीचे बहना। ऐसे ही इंद्रियों का स्वभाव है भोगों में बहना, मन का स्वभाव है उनके पीछे जाना लेकिन पुरुषार्थ करें तो इन्द्रियाँ संयत रहेंगी और मन उन्नत

हो जायेगा।

शरीर की आसक्ति शरीर को आलसी बना देगी, विलासी बना देगी और मन को असंयमी बना देगी। अगर प्रभु में, आत्मसुख पाने में आसक्ति हुई तो मन संयमी बनेगा, इन्द्रियाँ संयत और शरीर प्रयत्नशील रहेगा, पुरुषार्थी रहेगा। तुलसीदासजी ने कहा है :

जो न तरै भवसागर, नर समाज अस पाइ।
सो कृत निंदक मंदमति, आत्माहन अधो गति जाइ।

जिसने मनुष्य जीवन पाकर भी भवसागर से, विकारों के आकर्षण से खुद को नहीं बचाया, जो आत्मा-परमात्मा के ज्ञान में नहीं आया, वह मंदमति है, आत्म-हत्यारा है, अधोगति को जायेगा।

वशिष्ठजी महाराज कहते हैं : 'हे रामजी ! मनुष्य जीवन पाकर अगर उसने पुरुषार्थ नहीं किया, अपने आत्मसुख में, परमात्म भाव में आने का यत्न नहीं किया तो वह ऐसी जगह जाकर गिरेगा जहाँ से उसे उठानेवाला कोई नहीं मिलेगा।'

कबीरजी ने करूणा करके सुनाया है :

साँझ पडी दिन आथमा, दीन्हा चकवी रोय।
चलो चकवा वहँ जाइये, जहँ दिवस रैन न होय॥

चकवा कहता है :

रैन की बिछुडी चाकवी, आन मिले परभात।
सत्य का बिछुड़ा मानखा, दिवस मिले नहीं रात।

'रात्रि की बिछुड़ी चकवी तो फिर से प्रभात को आ मिलेगी लेकिन सत्य से बिछुड़ा मनुष्य न दिन को मिल पायेगा न रात्रि को।'

मनुष्य जन्म मिला है परमात्म-ज्ञान पाने के लिए, परमात्म-सुख पाने के लिए। जो सत्य-स्वरूप परमात्मा है उसका ज्ञान पाकर तुम ऐसे शिखर पर बैठ जाओगे जहाँ संसार के सुख-दुःख तुमको विचलित न कर सकेंगे। यह अवस्था आती है 'अहं' और 'मम' के नष्ट होने से।

अहंता और ममता का नाश होते ही चित्त में विश्रांति आने लगती है, परमात्म-प्रसाद की, परमात्म-ज्ञान की प्राप्ति स्वतः होने लगती है।

स्थूल 'शरीर' की आसक्ति मनुष्य को आलसी बना देती है, उसकी इन्द्रियों को विलासी बना देती है, मन को असंयमी बना देती है और बुद्धि को अविवेकी बना देती है। ईश्वर की आसक्ति शरीर, इन्द्रियों को शुद्ध, पुरुषार्थी, मन को संयमी, सदाचारी बनाकर बुद्धि को शुद्ध ज्ञान के प्रकाश से परिपूर्ण कर देती है।

यदि शरीर के बजाय आत्मा में प्रीति कर दें कि : 'मैं हाड़-मांस का शरीर नहीं हूँ... मैं तो ज्ञान-स्वरूप परमात्मा का सनातन सपूत हूँ। सब बदलता है फिर भी मैं नहीं बदलता' इस प्रकार का आत्मचिंतन एवं आत्मा में आसक्ति करने से शरीर का आलस्य दूर हो जाता है, इंद्रियाँ विलासिता से परे हो जाती हैं, मन का असंयम दूर होने लगता है और बुद्धि का अविवेक हटकर बुद्धि में समत्व का साम्राज्य प्रकट होता है।

स्वामी निश्चलदासजी के पास एक व्यक्ति ने आकर कहा : ''मुझे सत्य का मार्ग बताइये।''

स्वामी निश्चलदासजी उस वक्त प्याज के छोटे-छोटे पौधे उखाड़कर दूसरी जगह पर लगा रहे थे। बोले : ''सत्य का मार्ग देखो। इधर से उखाड़कर उधर लगा दो।''

व्यक्ति कुछ समझ न पाया। तब स्पष्ट करते हुए निश्चलदासजी महाराज बोले : ''इत्थऊ उखाड़ के उत्थे लगा दे। जो देह और उसके संबंधियों में प्रीति है उस प्रीति को उखाड़कर आत्मा में लगा दे, बस। सुख का मार्ग, सत्य का मार्ग कोई कठिन थोड़े ही है।''

सत्य का मार्ग, परमात्मा का मार्ग बुद्ध पुरुष के लिए, ब्रह्मज्ञानियों के लिए कठिन नहीं है और बुद्धुओं के लिए सरल नहीं है। आप अगर बुद्ध पुरुष का संग करते हो तो ईश्वरीय सुख सरल हो जाता है और बुद्धुओं का संग करते हो तो बड़ा कठिन है, भाई !

'मेरा तो यह निश्चय है, मेरा तो यहाँ जाने का निश्चय है...' तुम कौन हो ? यह तुम्हें पता है क्या ? तुम अपने को तो जानते नहीं और तुम्हारा निश्चय लेकर भाग रहे हो ?

हजारों-हजारों जन्मों तक भागे और भी भागो तो तुम्हारी मर्जी है। रुकना चाहो तो हम मदद करते हैं भागना चाहते हो तो तुम्हारी मर्जी... ज्ञान के शिखर पर चढ़ना चाहते हो तो हम मदद करते हैं, गिरना चाहते हो तो तुम्हारी मर्जी...। हम गिरने में मदद नहीं करेंगे इसीलिए ऐसा कह रहे हैं। बाकी तुम्हारी मर्जी...

जरा-सी लापरवाही और...

✻ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✻

गालव ऋषि ने खूब तपस्या की थी। तपस्या से शक्ति आती है। **पीड़ोद्भवा सिद्धयः...** पीड़ा सहन करने से शक्ति आती है। चाहे फिर गुरुद्वार जाने की पीड़ा सहन करे, चाहे गुरु के अनुभव को अपना अनुभव बनाने के लिए तप करे, चाहे ऋद्धि-सिद्धि पाने के लिए तप करे लेकिन तपस्या से मन का संकल्प साकार करने का सामर्थ्य आता है।

एक बार गालव ऋषि हाथ में अंजलि लेकर सूर्य को अर्घ्य देने की तैयारी कर रहे थे उसी वक्त चित्रसेन नामक गंधर्व ने आकाश-मार्ग से जाते हुए नीचे थूक दिया और वह थूक गालव ऋषि के हाथ की अंजलि में आ गिरा।

गालव ऋषि क्रोधित हो उठे कि : 'यह किसका थूक आया ?' उन्हें जानने में देर नहीं लगी। क्षणभर में ही उन्होंने जान लिया कि :

'चित्रसेन नामक गंधर्व उड़ता जा रहा है एवं वह लापरवाही से जहाँ-तहाँ थूकता है। उसको पता नहीं कि मेरा थूक कहाँ जाकर गिरेगा ? उस नालायक को मैं भस्म करूँगा।'

फिर गालव ऋषि को हुआ : 'ना, ना... यदि मैं उसे भस्म कर दूँ तो मेरी तपस्या नष्ट हो जायेगी।' यह सोचकर उन्होंने अपने को रोक लिया। गालव ऋषि ने तो अपने को रोक लिया किन्तु श्रीकृष्ण अपने को न रोक पाये ! गालव ऋषि श्रीकृष्ण से प्रेम करते थे। श्रीकृष्ण के चित्त में हुआ कि : 'चलो, गालव ऋषि के यहाँ जायें।'

गालव ऋषि को उदास देखकर श्रीकृष्ण ने पूछा : ''क्या कारण है, ऋषिवर !''

''अभी-अभी मैं अर्घ्य देने गया था और मेरी अंजलि में पानी था। उसी वक्त चित्रसेन नामक गंधर्व ने थूक दिया। मैं उसे शाप देकर भस्म करना चाहता था लेकिन केशव ! मेरी तपस्या नष्ट हो जायेगी, यह सोचकर मैंने अपने को रोक लिया। फिर भी चित्त नहीं मान रहा। उस लापरवाह चित्रसेन को दण्ड दिये बिना मुझे शांति नहीं मिल रही।''

''ऋषिवर ! मेरे होते हुए आप क्यों दण्ड दें ? मैं दण्ड दूँगा। मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि कल सुबह होते-होते चित्रसेन को मृत्युदंड दूँगा।''

यह बात चल ही रही थी कि देवर्षि नारद आये। उन्होंने देखा कि श्रीकृष्ण विचार में पड़े हैं। संत-हृदय सबके चित्त की दशा को मापने में बड़ा कुशल होता है। नारदजी श्रीकृष्ण के चित्त की दशा को माप गये और बोले :

''भगवन् ! आपका चिंतन करनेवाले लोग उल्लसित और आनंदित हो जाते हैं और आप स्वयं आज किसी उलझन में दिखाई दे रहे हैं ? कहिये, क्या बात है ?''

श्रीकृष्ण : ''देवर्षि ! आपका अनुमान सही है। चित्रसेन को मैं कैसे ललकारूँ, कहाँ खोजूँ और कैसे मारूँ ? इसमें मेरा चित्त लगा हुआ है।''

नारदजी का हृदय तो संत-हृदय ठहरा। बात जानकर वे खिसक गये। नारायण... नारायण... नारायण...। फिर पहुँचे चित्रसेन के पास। चित्रसेन ने उनका अर्घ्य-पाद्य से पूजन किया।

देवर्षि : ''चित्रसेन ! तुम्हारा भविष्य कैसा है, यह देखा है, कहीं ज्योतिष-व्योतिष ?''

चित्रसेन : ''महाराज ! आपसे बड़ा ज्योतिषी कहाँ मिलेगा ? मेरा हाथ देखिये, कुंडली देखिये।''

देवर्षि : ''कुंडली क्या देखूँ ? तुम्हारे पर मुसीबत आनेवाली है। तुम जिस समय थूके थे, उससे कुछ ही समय बाद श्रीकृष्ण ने तुम्हें कल सुबह सूर्योदय होते ही मृत्युदण्ड देने की शपथ ली है और भगवान कृष्ण ने शपथ ली है तो वे चुप नहीं

रहेंगे।'' यह कहकर देवर्षि ने उसे गालव ऋषि की सारी घटना सुना दी।

चित्रसेन के तो प्राण कण्ठ में आ गये। वह घबराया और भागा-भागा गया यक्षों के अधिपति कुबेर के पास। कुबेर ने कहा :

''श्रीकृष्ण के शत्रु को हम पनाह देकर श्रीकृष्ण से दुश्मनी मोल लें, यह हमारे बस की बात नहीं है। चित्रसेन ! हम तुम्हें पनाह नहीं दे सकते।''

आखिर चित्रसेन देवराज इन्द्र के पास गया लेकिन इन्द्र ने भी मना कर दिया कि :

'श्रीकृष्ण के ठुकराये हुए को हम रखें ? यह नहीं हो सकता।''

भटकता-भटकता अंत में चित्रसेन वापस देवर्षि नारद के चरणों में आया एवं बोला :

''महाराज ! बड़े-बड़े लोकपाल तो मुझे नहीं रख सके। आप ही ने 'मेरी मुसीबत आनेवाली है'- यह बताया है, इसका निराकरण भी आप ही बता सकते हैं। संत तो वे हस्ती होते हैं कि जहाँ आस्तिक भी झुक जाता है, नास्तिक भी झुक जाता है, देवता भी जिनकी बात मानते हैं, दैत्य भी मानते हैं और देवताओं के देव भगवान भी जिनकी बात रखते हैं। आप वे ही संत हैं। मैं आपकी शरण हूँ।''

देवर्षि : ''अच्छा भाई ! एक काम कर। अभी संध्या हो रही है। तू यमुना-किनारे पहुँच जा एवं जहाँ लोग स्नान करने आते हैं वहीं किसी कोने में घास-फूस की छोटी-मोटी झोंपड़ी बाँधकर रह। मध्यरात्रि में सुभद्रा स्नान करने आयेगी। तू उस समय रोना, आक्रंद करना, विलाप करना। ऐसा करुण आक्रंद करना कि सुभद्रा का दिल पिघल जाय। सुभद्रा पूछने को आयेगी किंतु तू तब तक मत बताना, जब तक वह वचन न दे दे। तेरी सहायता करने का, तेरी यह पीड़ा हरने का वचन दे, तभी तू अपना दुःख बताना।''

चित्रसेन ने नारदजी की बात मान ली। उसने वैसा ही किया।

नारदजी गये सुभद्रा के पास एवं बोले :

''सुभद्रा ! आज का पर्व तुझे पता है ? आज जो मध्यरात्रि को यमुनाजी में स्नान करेगा एवं दीन-दुःखी का दुःख हरेगा, उसको अमित पुण्य-पुंज प्राप्त होगा।

सुभद्रा ! हे कृष्णप्रिया ! तेरे पिछले पुण्यों से तू अभी पुण्यमय जीवन बिता रही है लेकिन आगे का भी तो कुछ सँवार। पहले की कमाई तो तू अभी खा रही है लेकिन आगे की कमाई भी तो चालू रख। सुभद्रा ! तू तो जानती है कि तप, दान, स्नान, व्रत, सत्संग आदि से मनुष्य पुण्य अर्जित करता है और आज के ग्रह, नक्षत्र, तिथि सब अनुकूल हैं। यमुना में स्नान करना तो वैसे ही पुण्यदायी है और आज का पर्व ! मध्यरात्रि में चुपके-से जाओ। किसीको बताओ नहीं। केवल एकाध सखी को ले जाओ। यमुनाजी में गोता मारो और अगर किसी दुःखी का आक्रंद सुनायी पड़े तो उसे सहायता करने का अवसर न चूकना। इससे अमिट पुण्य होगा।''

सुभद्रा अब चुप कैसे बैठती ? वह बोली : ''पुण्य अर्जित करने का अवसर ! यमुना में एक गोता मारकर किसी दीन-दुःखी की सहायता करनी है, बस ? देवर्षि ! इतना ही न ?''

देवर्षि : ''हाँ... बस, इतना ही। बड़े-बड़े अश्वमेध यज्ञ करनेवाले करते रहें, धुआँ चाटते रहें, तुम उससे भी आगे का पुण्य अर्जित कर लोगी, सुभद्रा !''

सुभद्रा ने तैयारी की एवं जल्दी सो गयी ताकि सब सखियाँ भी सो जायें। मध्यरात्रि में उठकर स्नान करने के लिए गयी। यमुना में गोता मारा। तभी उसे आक्रंदन सुनायी पड़ा। जहाँ से आवाज आ रही थी उस झोंपड़ी में सुभद्रा गयी तो देखा कि चित्रसेन रो रहा है।

सुभद्रा : ''बोल भाई ! तुझे क्या तकलीफ है ?''

चित्रसेन : ''मैं क्या बताऊँ ? मेरी मुसीबत कौन मिटा सकता है ?''

यह कहकर वह पुनः विलाप करने लगा।

सुभद्रा : ''बता भाई ! क्या बात है ?''

चित्रसेन : ''मैं नहीं बता सकता। अगर तुम वचन दो कि मेरी मुसीबत टालोगी तो मैं बताऊँ।''

सुभद्रा : ''वचन, एक नहीं दो वचन। मैं तुम्हारे

कष्ट का निवारण करूँगी। दीन की आर्त प्रार्थना, वह भी सुभद्रा के आगे ! देवर्षि नारद ने मुझे बता दिया है, मैं जरूर तेरे कष्ट का निवारण करूँगी।''

चित्रसेन : ''देवि ! और तो कोई कष्ट नहीं है। मैं आकाश-मार्ग से जा रहा था। मैंने थूका तो मेरा थूक गालव ऋषि की अंजलि में जाकर गिरा। गालव ऋषि दुःखी हुए। श्रीकृष्ण ने ऋषि के दुःख का निवारण करने के लिए संकल्प किया है कि कल सूर्योदय होते ही वे मेरी लापरवाही, गलती का मुझे मृत्यु दंड देंगे।''

सुभद्रा चिंता में पड़ गयी कि : 'क्या करूँ ? श्रीकृष्ण का संकल्प कैसे तोड़ूँ ?' फिर बोली :

''आखिर मैंने तुझे वचन दिया है। कोई बात नहीं।''

सुभद्रा व्यथित हो अर्जुन के आगे मुँह बनाकर बैठ गयी। अर्जुन ने पूछा : ''क्या बात है ?''

सुभद्रा : ''वचन दो तो बताऊँ।''

अर्जुन : ''सुभद्रा ! तू प्रभातकाल में नहाकर आ रही है। तुझे वचन की क्या जरूरत ? चलो, फिर भी दिया वचन।''

सुभद्रा ने चित्रसेन की सारी कथा सुना दी एवं कहा : ''श्रीकृष्ण ने चित्रसेन को मारने का संकल्प किया है।''

श्रीकृष्ण-भक्त अर्जुन तनिक शांत हुआ। फिर उसने सुभद्रा से कहा : ''कोई बात नहीं। चित्रसेन को बुलाओ।''

चित्रसेन को बुलाया गया। अर्जुन ने उससे कहा : ''तू फिकर मत कर। तेरे प्राणों की रक्षा मैं करूँगा। हालाँकि मुझे शक्ति श्रीकृष्ण से ही प्राप्त हुई है फिर भी उनके संकल्प को मैं साकार नहीं होने दूँगा।''

चित्रसेन की जान में कुछ जान आयी। सुभद्रा चकित हो गयी ! देवर्षि नारद यह सारा खेल जान गये और वे श्रीकृष्ण के पास आकर बोले :

''श्रीकृष्ण ! जिसे आप मारने का संकल्प कर बैठे हो, आपके भक्त उसे तारने का वचन दे बैठे हैं। अब क्या करोगे, महाराज !''

नारदजी गजब के हैं ! कितना सुंदर आयोजन करते हैं ! जो लोग झगड़ा कराते हैं तो उन्हें लोग बोलते हैं : 'यह तो कोई नारद है।' यह नारदजी का अपमान है। यह नारदजी को गाली देने जैसा है। नारदजी शांत लोगों में झगड़ा नहीं कराते अपितु झगड़े के सिवाय कोई उपाय नहीं होता तो कलह कराकर भी, क्रांति कराकर भी शांति लाते हैं।

जो किसीको छुरा मारता है उस गुण्डे में एवं छुरा घुमानेवाले डॉक्टर में कुछ अंतर समझो। जो झगड़ा करवाते हैं वे तो गुण्डागर्दी करते हैं लेकिन नारदजी जो झगड़ा करवाते हैं वह तो डॉक्टर की नाईं ऑपरेशन की व्यवस्था करते हैं। इसलिए देवर्षि नारद का नाम जिस किसी हरामखोर के ऊपर आरोपित नहीं करना चाहिए। नारदजी जैसी ऊँचाई उसमें कहाँ ?

मुझे कोई नारदजी कह दे तो मैं नाराज हो जाऊँगा क्योंकि नारदजी की ऊँचाई मुझमें नहीं है। नारदजी चिरंजीवी हैं। वे अदृश्य हो सकते हैं। नारदजी की कमाई बहुत गहरी है। कोई साधारण आदमी नारदजी हो सकता है क्या ? देवर्षि नारद तो ऐसे हैं कि भगवान भी उनसे सलाह माँगते हैं।

गालव ऋषि प्रतीक्षा कर रहे हैं कि कल का सूर्योदय कब हो और चित्रसेन श्रीकृष्ण के कोप का शिकार बने लेकिन नारदजी सोचते हैं कि कल का सूर्योदय कब हो कि वह प्रहर गुजर जाय ताकि बेचारा चित्रसेन बच जाय।

गालवजी अच्छे हैं, तपस्वी हैं लेकिन नारदजी तपस्वी भी हैं, योगी भी हैं और लोकसंत भी हैं। लोगों का मंगल करना ही नारदजी का स्वभाव है। ऐसे मंगल चाहनेवाले संत जहाँ भी हों, वह धरती पावन है। ऐसे संतों के श्रीचरण जहाँ भी पड़ें, वह भूमि तीर्थभूमि हो जाती है। अगर संत नहीं होते तो श्रीरामावतार भी नहीं होता। संतों ने ही बताया कि : 'इस प्रकार तप करो और भगवान आकर वरदान माँगने के लिए कहें तो ऐसा माँगना।' संत न होते तो श्रीकृष्णावतार भी नहीं होता। संत न होते तो हमें वृंदावन की कुंज-गलियाँ कौन बताता ? संत न होते तो हमें अयोध्या का तीर्थ कौन बताता ?

नारदजी की बात सुनकर श्रीकृष्ण ने कहा :

''देवर्षि ! अब आप जरा अर्जुन को समझाइये कि मैंने तपस्वी गालव ऋषि की प्रसन्नता के लिए चित्रसेन को मारने का संकल्प किया है । अतः उनकी प्रसन्नता के लिए ही तू भी चित्रसेन को शरण मत दे ।''

नारदजी ने अर्जुन को समझाया । अर्जुन ने कहा :

''वैसे तो मेरे पास जो शक्ति एवं योग्यता है वह उन्हीं की दी हुई है । लेकिन आप उनसे कह दीजिये कि मैं तो प्रतिज्ञा नहीं तोड़ सकता हूँ । वे प्रतिज्ञा तोड़ने में समर्थ हैं क्योंकि भक्तों के लिए उन्होंने कई बार प्रतिज्ञा तोड़ी है । इसलिए मैं तो उनसे क्षमा चाहूँगा क्योंकि मैं चित्रसेन को शरण दे बैठा हूँ । उनको मेरा नमस्कार है । मेरे पास जो भी है, वह उन्हीं की शक्ति है ।''

श्रीकृष्ण ने यह जवाब सुना तो कहा : ''हद हो गयी ! मेरी बिल्ली मुझसे ही म्याऊँ ? मेरा अर्जुन, मेरे ही सामने तैयार ?''

श्रीकृष्ण ने शंखनाद किया । योद्धा आये । उन्हें युद्ध की तैयारी का संकेत दे दिया । अर्जुन ने भी अपने योद्धाओं को युद्ध की तैयारी का संकेत दे दिया । एक जरा-सी बोलने की व थूकने की लापरवाही कितना भयंकर एवं खतरनाक परिणाम लाती है ! ऐसे ही द्रौपदी के दो शब्द 'अंधे की औलाद अंधी' ने महाभारत का युद्ध करवा दिया । इस मुँह से थूक निकला तो भी युद्ध ले आया और मुँह से अपशब्द निकला तो भी युद्ध ले आया । यदि मुँह से हरिकथा निकलती है तो वह परमात्मा को प्रगट करानेवाला सत्संग बन जाती है ।

युद्ध का शंख बजा । नारदजी चिंतित हो गये कि अब क्या होगा ? क्या एक को बचाने में कइयों के सिर कटेंगे ? नारदजी ने फिर अपना खेल खेला । जो माता-पिता की जन्म-मरणरूपी नाड़ से बचाये उसका नाम है नारद । दूसरा अर्थ है जो नारायण से मिला दे, उसका नाम है नारद । जो अपने हृदय में नारायण की भक्ति भर दे, वह है नारद । 'नारद' शब्द के बहुत-से अर्थ विद्वानों ने, संस्कृत भाषा के जानकारों ने किये हैं ।

युद्ध की तैयारियाँ हो चुकी थी । युद्ध शुरू होने ही वाला था । श्रीकृष्ण ने देखा कि गांडीव धनुषधारी अर्जुन सामने है अतः ऐसा-वैसा अस्त्र चलाना तो ठीक नहीं, औरों की हत्या होगी । अतः उन्होंने बड़ा खतरनाक अस्त्र सुदर्शन चक्र छोड़ा जो सिर काटकर आ जाय लेकिन अर्जुन भी कम नहीं था । उसने श्रीकृष्ण का चिंतन करके भगवान शिव का दिया हुआ पाशुपतास्त्र छोड़ा । अर्जुन को हुआ कि सुदर्शन के आगे पाशुपतास्त्र है लेकिन दोनों विनाश कर देंगे ।

दोनों अस्त्र आपस में रुके । नारदजी ने जाकर श्रीकृष्ण से कहा : ''प्रभु ! आप तो भक्तवत्सल हैं । वहाँ भक्त का पाशुपतास्त्र है जो शिवजी का दिया हुआ है । अगर उस पर सुदर्शन की पराजय होगी तब भी आपको अच्छा नहीं लगेगा और आपका शिष्य हार जायेगा तब भी आपको अच्छा नहीं लगेगा । जो हुआ सो हुआ । अब इस युद्ध का अंत लायें ।''

फिर नारदजी ने अर्जुन से कहा : ''अर्जुन ! रुक जाओ । तुम्हारे इष्ट श्रीकृष्ण का सुदर्शन चक्र एवं तुझे दिया गया शिवजी का पाशुपतास्त्र, दोनों प्रलयकारी हैं । एक छोटी-सी बात पर इतनी बड़ी-बड़ी शक्तियों का खर्च हो रहा है । माफी माँगो, जल्दी करो, शरण में चले जाओ ।''

अर्जुन श्रीकृष्ण की शरण में आया । श्रीकृष्ण ने अर्जुन को गले लगा लिया । युद्ध-विराम की घोषणा हो गयी । युद्ध प्रेम में बदल गया । प्रेमी लोग युद्ध भी करते हैं तो कहते हैं : 'ठीक है भाई ! जाने दो । जो हुआ सो हुआ ।'

आपके जीवन में भी पति-पत्नी, भाई-बहन, कुटुंब-कबीले में कोई संघर्ष हुआ हो तो उसे भूलकर आपस में हाथ मिला लो कि : 'भाई ! जो हुआ सो हुआ, भूल जाओ ।'

गालव ऋषि को हुआ कि यह तो हमारी अच्छी मखौल हुई । अर्जुन ने पैर पकड़ लिए और श्रीकृष्ण ने गले लगा दिया ! मेरे सामने तो वचन दिया था कि : 'सूर्योदय होते ही चित्रसेन को मार डालूँगा ।'

फिर उन्होंनें कहा :

''अब देख लो मेरी तपस्या का प्रभाव। उस चित्रसेन को, सुभद्रा को, अर्जुन को और श्रीकृष्ण को मैं दिखा दूँगा कि तप क्या होता है ?''

उन्होंने हाथ में अंजलि लेकर कहा : ''मैं तुम सभी को भस्म कर दूँगा।''

श्रीकृष्ण वचन दे चुके थे एवं अर्जुन श्रीकृष्ण के चरणों में पड़ चुके थे। नारदजी सूत्रधार थे इस लीला के। अब बाजी सुभद्रा ने अपने हाथ में ली। नारियों ने कैसे-कैसे खेल खेले एवं देशवासियों को कैसी-कैसी ऊँची समझ दी ! सुभद्रा ने कहा :

'' हे गालव ऋषि ! आपको मेरा प्रणाम है।''

ज्यों-ही गालव ऋषि कुपित होकर संकल्प करके अंजलि जमीन पर फेंकने को उद्यत हुए त्यों-ही सुभद्रा ने कहा :

''गालव ऋषि के हाथ की अंजलि जमीन पर गिरेगी तब सब भस्म होंगे न। अगर मैंने अपने पति के सिवाय अन्य किसीको अपना पति न माना हो तो... अगर मैं सत्य में ही निष्ठ रही होऊँ तो गालव ऋषि के हाथ की अंजलि से एक बूँद भी जमीन पर न गिरे... अंजलि ज्यों-की-त्यों धरी रह जाय।''

सुभद्रा ने संकल्प करके अंजलि पर दृष्टि डाली तो अंजलि ज्यों-की-त्यों धरी रह गयी। गालव ऋषि शर्मिन्दा हो गये। उन्होंने सबकी तरफ कुछ संकोच के भाव से देखा। सबने कहा :

''ऋषिवर ! यह भगवान की इच्छा थी इसीलिए ऐसी लीला हो गयी। आप भी चित्रसेन को क्षमा कर दो और हमें भी क्षमा कर दो।''

गालव ऋषि ने चित्रसेन को एवं सबको क्षमा कर दिया। सब एक-दूसरे की जय-जयकार करते हुए प्रसन्नचित्त होकर अपनी-अपनी जगह पर चल पड़े।

कैसा आश्चर्य ! जरा-सा थूक कितने बड़े युद्ध की तैयारी करवा सकता है ? संत की कृपा उस युद्ध को रुकवा भी तो सकती है। किसीने ठीक ही कहा है :

संत न होते जगत में तो जल मरता संसार।

*

✽ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✽

कीमती मानव जीवन

एक राजा जंगल में भटक गया। भटकते-भटकते वहाँ उसे एक कुटिया दिखायी दी। वह उस कुटिया में गया। कुटिया के निवासी ने भूखे-प्यासे राजा को भोजन करवाया।

संतुष्ट होकर राजा ने कहा : ''दोस्त ! तूने संकट के समय मेरे प्राणों की रक्षा की है। मैं इस देश का राजा हूँ। यहाँ से आधा मील दूर चंदन का जंगल है। चल, तुझे दिखा देता हूँ।''

चंदन का जंगल दिखाते हुए राजा ने कहा : ''यह चंदन का जंगल मैं तेरे हवाले कर देता हूँ। खूब लकडियाँ काट, खूब कमा और सुखी रह।''

राजा तो चले गये। उस मूर्ख ने लकड़ियाँ काटी, कोयला बनाया और बेचता ही गया। बारिश के दिन आये, तब तक लगभग सब वृक्ष कट चुके थे, केवल एक-दो वृक्ष ही बचे थे। बारिश की वजह से उन्हें जलाकर कोयला तो नहीं बनाया जा सकता था अतः वह लकड़ियाँ बेचने गया। लकड़ी की सुंगध देखकर लोगों ने ज्यादा पैसे दिये। दो-पाँच ग्राहक एक साथ मिल गये : ''भैया ! ये तो चंदन है चंदन। कितना लेगा ? दस ले ले, बीस ले ले।''

लकड़हारा : ''इस थोड़ी-सी लकड़ी के इतने सारे पैसे !''

''पागल ! ये तो चंदन है। ऐसी लकड़ियाँ और हों तो ले आ।''

वह लकड़हारा सिर कूटने लगा : ''हाय ! ऐसी लकड़ियाँ तो बहुत सारी थीं लेकिन नासमझी में

मैंने उन्हें कोयले में बदल डाला। चंदन का जंगल कोयले के भाव में बेच दिया।''

उस मूर्ख लकड़हारे ने तो चंदन की लकड़ियाँ कोयले के भाव में खपा दीं लेकिन हम चंदन से भी कीमती, ईश्वरत्व को पाने के अधिकारी मानव देह को विकारों में खपा रहे हैं। उस जंगली लकड़हारे ने जो गलती की, उससे भी ज्यादा गलती हम कर रहे हैं। मर जानेवाले, मिटजानेवाले शरीर के पीछे अपने हम आत्म-वैभव को लुटा रहे हैं।

*

वास्तविक अमृत कहाँ ?

राजा भोज के दरबार में चर्चा हो रही थी कि : 'अमृत कहाँ होगा ?'

एक विद्वान ने कहा : ''अमृत कहाँ होगा पूछने की क्या जरूरत है ? स्वर्ग में अमृत है।''

दूसरे विद्वान ने कहा : ''ठहरो। स्वर्ग में अगर अमृत होता तो फिर स्वर्ग से पतन नहीं होना चाहिए। पुण्यों का नाश नहीं होना चाहिए और स्वर्ग में राग-द्वेष नहीं होना चाहिए। हम स्वर्ग में वास्तविक अमृत नहीं समझते हैं।''

तीसरे विद्वान ने कहा : ''अमृत चंद्रमा में है। चंद्रमा अमृत बरसाता है। उसीसे पेड़-पौधे एवं औषधियाँ पुष्ट होती हैं।''

चौथे विद्वान ने कहा : ''अगर चंद्रमा में अमृत है तो उसका क्षय क्यों होता है ? पूनम के बाद फिर क्षय होने लगता है। दूसरे, उसमें कलंक क्यों दिखता है ?''

अनजान कामी कवियों के रंग में रंगे कलयुगी मति के एक कवि ने कहा : ''अमृत न स्वर्ग में है, न चंद्रमा में है। अमृत तो स्त्री के होठों में है, अधरामृत।''

किसी जानकार ने कहा : ''स्त्री में अगर अमृत है तो वह विधवा क्यों होती है ? दुःखी क्यों होती है ? उसके होठों के नजदीक बदबू क्यों आती है ?''

किसी ने कहा : ''अमृत तो सर्पों के पास होता है तो दूसरे ने कहा मणिधरों के पास अगर अमृत होता है तो उनमें विष कहाँ से आता है ? विष भी अमृत हो जाना चाहिए।''

किसी ने कहा : ''सागर में अमृत है।''

''अगर सागर में अमृत होता तो सागर खारा क्यों होता ?''

इस प्रकार की चर्चा चल रही थी। इतने में कालीदासजी आये। सबने उनसे पूछा : ''अमृत कहाँ होता है ?''

''तुम्हारा क्या निर्णय है ?''

किसीने कहा, स्वर्ग में होता है। किसीने कहा, मणिधरों के पास होता है। किसीने स्त्री में बताया। किसीने चंद्रमा में तो किसीने सागर में बताया।

आखिर प्रश्न का उत्तर पाने के लिए सबने कालिदासजी को प्रणाम किया और कहा : ''आप ही बताइये।''

उन्होंने बताया : ''न स्वर्ग में वास्तविक अमृत है, न पृथ्वी पर वास्तविक अमृत है, न स्त्री में अमृत है, न सागर में शाश्वत अमृत है, न चंद्रमा में शाश्वत अमृत है। स्वर्ग का अमृत तो दरिया का क्षोभ करने से पैदा हुआ था और स्त्री को अमृत मानते हो तो विकारी को उसमें अमृत दिखता है, निर्विकारी को तो नहीं दिखता। रज-वीर्य से तो शरीर बना फिर उसमें अमृत कहाँ से आया ? अमृत तो हमें मिला संतों की सभा में जहाँ अमर तत्त्व की बात सुनते-सुनते ये मृत चित्त और मृत शरीर भी अमृत जैसे आनंद में सराबोर हो जाते हैं। अमृत हमने संतों की सभा में पाया।'' अमृत हमने सत्संग में पाया और उसी अमृत के बल से हम चित्त के प्रसाद से, आत्म-अमृत से संतुष्ट हैं और तुम पर निगाह डालता हूँ तो तुम्हें भी संतोष हो रहा है, आनंद आ रहा है। सच्चा अमृत तो संतों की सभा में है।

कंठे सुधा वसति वै भगवज्जनानाम्।

भगवान के प्यारे भक्तों, संतों के कंठ में, उनकी आत्मिक वाणी में ही वास्तविक अमृत होता है।

स्वर्ग का अमृत तो दरिया का मंथन करने से निकला था लेकिन संत के हृदय का अमृत तो परमात्मा का चिंतन करने से, परमात्म तत्त्व के बोध के प्रभाव से आनंद उत्पन्न करते-करते निकलता है। स्वर्ग का अमृत तो क्षोभ से निकला था, मंथन से निकला था। लेकिन संत के हृदय से परमात्मा की चर्चा शीतलता और शांति से निकलती है। वही सच्चा अमृत है।

ध्यान के क्षणों में...

※ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ※

अपने मन को परमात्मा की खूब-खूब गहरी शांति में डूबने दो... अपने अंतर्यामी परमात्मा से स्नेह करते जाओ... ऐसे घोर कलियुग में भी हम ब्रह्मज्ञान का अमृतपान कर रहे हैं यह तेरी ही कृपा है प्रभु !... दृढ़ भावना करो कि परमात्मा, चैतन्य तुम्हारे हृदय में बस रहा है और वह परमात्मा तुम्हारे दिल में आनंद का दरिया बहा रहा है ... ऋषियों की खुमारी दे रहा है... प्रसन्नता का पैगाम सुनाये जा रहा है... वाह ! वाह !

बरस रही है परमात्मा की कृपा... बह रही है संतों की करुणा... अपने चित्त को परमात्मा में विश्रांत होने दो... चित्त की समस्त दुर्बलताओं को दुष्ट इच्छाओं को, भय और चिन्ताओं को ॐ की गदा लगा कर भगा दो... तुम्हारा जन्म संसार में पीड़ित होने के लिए नहीं हुआ... तुम्हारा जन्म संसार का बोझा ढोने के लिए नहीं हुआ... तुम्हारा जन्म तो परब्रह्म परमात्मा के साथ हाथ मिलाने के लिए हुआ है...

बोतल की शराब शराबियों को मुबारक है, हम तो परमात्म ध्यान की शराब में मस्त होने के लिए ही पैदा हुए हैं... ॐ... ॐ... ॐ... विकारी व दुर्बल विचार जैसा दुनिया में और कोई शत्रु नहीं और संयमी व बलवान विचार के समान दुनिया में कोई मित्र नहीं... परमात्मा तुम्हारे साथ है... परमात्मा तुम्हारे पास है... और तुम अपने को तुच्छ चीजों में बेच रहे हो ? तुच्छ रीति-रिवाजों में, तुच्छ रुपये-पैसों में खपा रहे हो ? नहीं, तुम्हारा जन्म परमात्मा को पाने के लिए ही हुआ है...

इस बात को सदैव याद रखो : 'ईश्वर के सिवाय कहीं भी मन लगाया तो अंत में रोना ही पड़ेगा...' इसलिए संसार की इच्छाओं के लिए अभी से ही रो लें... सोच लें कि संसार की इच्छाएँ पूरी हुईं तो क्या और पूरी न हुईं तो क्या ? हम तो परमात्मा को पायेंगे, बस... ॐ... ॐ... ॐ...

धनभागी थे वे ग्वाल !... धनभागी थीं वे गोपियाँ ! जो दिलबर की स्मृति से अपने दिल का नाद मिला देती थीं... कृष्ण की गुनगुनाहट में अपनी गुनगुनाहट मिला देती थीं... बंसी के नाद में अपनी चिंताएँ और अपना देहाभिमान बहा देती थीं... निर्दोष ग्वाल-गोपियों की आँखों से प्रेमामृत टपकता था और वे बूँदे जहाँ गिरीं वह वृंदावन आज भी पूजा जाता है... हजारों वर्ष बीत गये फिर भी भक्तों की चरणरज पूजी जाती है... हजारों वर्ष बीत जायें, लाखों मनुष्य गुजर जायें लेकिन जिस जगह पर, जिस भूमि पर भगवान का प्यारा भगवान के लिए घड़ीभर भी अपने चित्त में डुबकी मारता है वह भूमि पवित्र हो जाती है, वह भूमि तीर्थभूमि हो जाती है...

हे पापी दिल ! तू संसार के लिए रोया लेकिन तेरे पाप खत्म न हुए... तू पुत्र-परिवार के लिए रोता है... तू मान-बड़ाई के लिए रोता है ? लेकिन भगवान का भक्त तो भगवान के लिए रोता है... भगवान के लिए हँसता है... भगवान के लिए नाचता है... भगवान के लिए गाता है... हे मोह-माया के कीचड़ में फँसे हुए संसारियों ! तुम मोह-ममता के लिए रोओ, नाचो, हँसो... हम तो अपने मालिक के लिए रोयेंगे... पिया के लिए हँसेंगे... प्रभु के लिए नाचेंगे... आत्मा-परमात्मा के लिए गायेंगे...

सुन रखा है प्रेम, परमात्मा को पाने की उत्तम कुंजी है... त्याग परमात्मा को पाने की सुहावनी-सुंदर कुंजी है... प्रार्थना भीतर-ही-भीतर परमात्मा को खींच लाने का सामर्थ्य रखती है... मन इधर-उधर भाग जाय तो कभी परमात्मा को प्रेम करो... कभी परमात्मा को प्रार्थना करो... कभी संसार की तुच्छ इच्छाओं का त्याग करके भीतर गोता मारो...

मौत तुम्हें मारे उसके पहले अपने पापों को जला दो... मौत तुम्हें जलाये उसके पहले तुम मौत को जला दो... ॐ... ॐ... ॐ...

भय और चिंता मलीन दिल में होती है, जिस दिल में परमात्मा के लिए प्यार है, परमात्मा के लिए तड़प है, परमात्म-ज्ञान पाने की तड़प है उस दिल में भय क्यों टिकेगा ?... उस दिल में चिंताएँ क्यों टिकेंगी ?... उस दिल में तुच्छ इच्छाएँ कब तक रहेंगी ?... ॐ... ॐ... ॐ...

ऐ मलीन विचारो ! ऐ मलीन इच्छाओ ! ऐ मलीन कामनाओ ! ऐ मलीन कर्मो ! अब तुम्हें भाग जाना पड़ेगा... हम पवित्र भाव को भर रहे हैं... पवित्र कर्मों को भर रहे हैं... पवित्र प्रेम को भर रहे हैं... पवित्र नाद को गुँजा रहे हैं... ॐ शांति... ॐ आनंद...

हजारों-हजारों चिन्ताएँ, लाखों-लाखों परेशानियाँ, युग-युग के संस्कार... जन्म-जन्म के माता-पिता... सदियों के साथी न दे सके वह हमें सत्संग से हँसते-हँसते मिल रहा है, हम उसे पाकर ही रहेंगे... हरि ॐ... हरि ॐ...

भय, शोक, अशांति, उद्वेग ! हमारे दिल से भागो... हमारे दिल में छुपे हुए परमात्मा को प्रगट होने दो... जैसे शेरनी का दूध स्वर्ण-पात्र में ही ठहर सकता है वैसे ही ये वेदांत के विचार पुण्यात्मा के दिल में ही ठहर सकते हैं... विकारी और अंहकारी लोग इन विचारों को सुनने के काबिल नहीं होते... ॐ... ॐ... ॐ...

अवगाहन करो अपने आत्मदेव में... चित्त की गहरी शांति में विश्रांति पा जाने दो अपने मन को... परमात्मा मौन की भाषा में समझ में आता है परम मौन अवस्था, खूब ऊँचे दर्जे के मौन में सत्य का साक्षात्कार होता है... सत्यस्वरूप परमात्मा का दीदार होता है उस निःसंकल्प दशा में... वे सुहावनी घड़ियाँ सदियों के पाप-ताप काटकर जीवन्मुक्ति की दशा प्राप्त करा देती हैं...

मैं तन से, मन से परे हूँ... मैं शरीरवाला होते हुए भी शरीर से न्यारा आत्मा हूँ... मुझे शरीर की इज्जत-बेइज्जती की परवाह नहीं, क्योंकि मैं आत्मा हूँ... मेरे संकल्प-विकल्प शांत हो रहे हैं... मेरा हृदय परमात्मा की शांति में शांत हो रहा है... मैं शुद्धात्मा में... अंतर्यामी परमात्मा में डूब रहा हूँ... लोग मंदिर में जाते हैं, मैं दिल के मंदिर में जा रहा हूँ...वाह ! वाह!...

महापुरुषों की युक्ति !

* संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से *

संसारियों को कई गुत्थियों का हल नहीं मिल पाता। यदि मिल भी जाता है तो एक को राजी करने में दूसरे को नाराज करना पड़ता है एवं नाराज हुए व्यक्ति के कोप का भाजन बनना पड़ता है। जबकि ज्ञानियों के लिए उन गुत्थियों को हल करना आसान होता है। ज्ञानी महापुरुष ऐसी दक्षता से गुत्थी सुलझा देते हैं कि किसी भी पक्ष को खराब न लगे। इसीलिए देवर्षि नारद की बातें देव-दानव दोनों मानते थे।

ऐसी ही एक घटना मेरे गुरुदेव के साथ परदेश में घटी थी : एयरपोर्ट पर गुरुदेव को लेने के लिए बड़ी-बड़ी हस्तियाँ आयीं थीं। कई लोग अपनी बड़ी लग्जरी गाड़ी में गुरुदेव को बैठाने के लिए उत्सुक थे। एक-दो आगेवानों के कहने से और सब तो मान गये लेकिन दो भक्त हठ पर उतर गये - ''गुरुदेव बैठेंगे तो मेरी ही गाड़ी में।'' मामला जटिल हो गया। दोनों में से एक भी टस-से-मस होने को तैयार न था। इन दोनों भक्तों की जिद्द अन्य भक्तों के लिए सिरदर्द का कारण बन गयी।

एक ने कहा : ''यदि पूज्य गुरुदेव मेरी गाड़ी में नहीं बैठेंगे तो मैं गाड़ी के नीचे सो जाऊँगा।''

दूसरे ने कहा : ''पूज्य गुरुदेव मेरी गाड़ी में नहीं बैठेंगे तो मैं जीवित न रहूँगा।''

ऐसी परिस्थिति में 'क्या करें, क्या न करें ?' यह किसीकी समझ में नहीं आ रहा था। दोनों बड़ी हस्तियाँ थी, अहं की साइज भी बड़ी थी। दोनों में

से किसीको भी बुरा न लगे - ऐसा सभी भक्त चाहते थे। इस बहाने भी ब्रह्मज्ञानी महापुरुष का सान्निध्य मिले तो अच्छा है - ऐसी उदात्त भावना से उन्होंने हल ढूँढने का प्रयास किया किन्तु असफलता मिली।

इतने में तो मेरे गुरुदेव का प्लेन एयरपोर्ट पर आ गया। पूज्य गुरुदेव बाहर आये, तब समितिवालों ने पूज्य गुरुदेव का भव्य स्वागत करके खूब नम्रता से परिस्थिति से अवगत कराया एवं पूछा : ''बापूजी ! अब क्या करें।''

ब्रह्मवेत्ता महापुरुष कभी-कभी ही परदेश पधारते हैं। अतः स्वाभाविक है कि प्रत्येक व्यक्ति निकट का सान्निध्य प्राप्त करने का प्रयत्न करे। प्रेम से प्रयत्न करना अलग बात है एवं नासमझ की तरह जिद्द करना अलग बात है। संत तो प्रेम से वश हो जाते हैं जबकि जिद्द के साथ नासमझी उपरामता ले आती है। लोगों ने कहा :

''दोनों के पास एक-दूसरे से टक्कर ले - ऐसी गाड़ियाँ एवं निवास हैं। बहुत समझाया पर मानते नहीं हैं। हमारी गाड़ी में बैठकर हमारे घर आयें - ऐसी जिद्द लेकर बैठे हैं। अब आप ही इसका हल बताने की कृपा करें। हम तो परेशान हो गये हैं।''

पूज्य गुरुदेव बड़ी सरलता एवं सहजता से बोले : ''भाई ! इसमें परेशान होने जैसी बात ही कहाँ है ? सीधी बात है और सरल हल है। जिसकी गाड़ी में बैठूँगा उसके घर नहीं जाऊँगा और जिसके घर जाऊँगा उसकी गाड़ी में नहीं बैठूँगा। अब निश्चय कर लो।''

इस जटिल गुत्थी का हल गुरुदेव ने चुटकी बजाते ही कर दिया कि : 'एक की गाड़ी, दूसरे का घर।'

दोनों पूज्य गुरुदेव के आगे हाथ जोड़कर खड़े रह गये : ''गुरुदेव ! आप जिस गाड़ी में बैठना चाहते हैं उसी में बैठें। आपकी मर्जी के अनुसार ही होने दें।''

थोड़ी देर पहले तो हठ पर उतरे थे परन्तु संत के व्यवहार-कुशलतापूर्ण हल से दोनों ने जिद्द छोड़कर निर्णय भी संत की मर्जी पर ही छोड़ दिया !

प्राणीमात्र के परम हितैषी संतजनों द्वारा सदैव सर्व का हित ही होता है। **ब्रह्मज्ञानी ते कछु बुरा न भया।**

भक्तशिरोमणि गोस्वामी तुलसीदासजी

[गतांक से आगे]

जब टोडरमलजी को यह बात मालूम हुई, तब उन्होंने आकर तुलसीदासजी से बड़ी अनुनय-विनय की और बहुत आग्रह करके अस्सीघाट पर रहने के लिए स्थान और गंगाजी का घाट बनवा दिया। श्रीगोस्वामीजी वहीं रहने लगे। रात में तलवार लेकर कलियुग आया, उसने तुलसीदासजी को भयभीत करके कहा कि : 'अपनी सब पुस्तकें जल में डुबा दो, नहीं तो मैं तुम्हें सावधान किये देता हूँ कि तुम्हें बड़ा कष्ट दूँगा।' इतना कहकर वह चला गया। उन्होंने श्रीहनुमानजी का ध्यान किया। श्रीहनुमानजी ने कहा कि : 'ऐसे तो वह मानेगा नहीं, तुम अपनी विनयावली लिखकर दो तो मैं उसे दण्ड दिलाऊँ।' श्री गोस्वामीजी ने उसी समय विनयावली का निर्माण किया। भगवान ने सुनकर उस पर सही कर दी और तुलसीदासजी को निर्भय कर दिया।

श्री गोस्वामीजी ने जनकपुर की यात्रा की। रास्ते में बहुत-से लोगों का कल्याण किया। अनेकों चमत्कार प्रकट हुए। एक स्थान पर धनीदास ने आकर कहा कि : 'कल मेरे प्राण जानेवाले हैं, मैंने यह कहकर कि भगवान स्वयं भोजन कर रहे हैं चूहे को प्रसाद खिला दिया। यहाँ के जमींदार रघुनाथ सिंह को मेरा अपराध मालूम हो गया। उन्होंने कहा है कि यदि कल मेरे सामने भगवान भोजन नहीं करेंगे तो मैं तुम्हारा वध कर डालूँगा। अब आप मेरी रक्षा कीजिये।' गोस्वामीजी ने उन्हें ढाढ़स बँधाया। धनीदास ने रसोई बनायी और जमींदार के सामने आकर भगवान ने

भोजन किया। गोस्वामीजी ने भगवान की महिमा गायी, जमींदार उन्हें अपने घर ले गया। उसने गाँव का नाम बदलकर रघुनाथपुर रख दिया। वहाँ से चलकर विचरते-विचरते वे हरिहर-क्षेत्र पहुँचे और मिथिला पास ही रह गयी। जनकनन्दिनी श्री जानकीजी एक बालिका का वेश धारण करके आयीं और उन्होंने गोस्वामीजी को खीर खिलायी। जब गोस्वामीजी को यह बात मालूम हुई तब वे उनकी अहैतुकी दया का अनुभव कर विह्वल हो गये।

आगे चलने पर ब्राह्मणों ने उनके पास आकर कहा कि : 'हम लोग बड़ी विपत्ति में हैं। यहाँ के नवाब ने हमारी बारहों गाँवों की वृत्ति छीन ली है।' गोस्वामीजी ने श्रीहनुमानजी का स्मरण किया और उन्होंने नवाब को दण्ड देकर उनकी वृत्ति वापस करा दी। संवत् १६४० में मिथिला से काशी आये और वहाँ दोहावली का संग्रह किया। संवत् १६४१ मार्गशीर्ष शुक्ल सप्तमी रविवार को उन्होंने दोहावली रामायण का लिखना समाप्त किया।

एक बार काशी में महामारी का प्रकोप हुआ। सब लोगों ने बड़ी दीनता से प्रार्थना की कि : 'हे स्वामिन्! आप हम लोगों की प्रार्थना सुनिये। हम लोग बड़े निर्बल हैं। हमारी रक्षा भगवान के सेवक या स्वयं भगवान ही कर सकते हैं।' उनकी दीनता देखकर गोस्वामीजी का कोमल चित्त द्रवित हो गया और उन्होंने कवित्त बनाकर भगवान से प्रार्थना की। भगवान की कृपा से महामारी भाग गयी, सब लोग सुखी हो गये।

एक दिन महाकवि केशवदास तुलसीदासजी से मिलने गये। बाहर से उन्होंने सूचना भेजी कि मैं मिलना चाहता हूँ। गोस्वामीजी ने कहा कि : 'केशव प्राकृत कवि हैं उन्हें आने दो।'

यह बात केशव के कानों में पड़ी। वे बिना मिले ही लौट आये। अपनी तुच्छता उनकी समझ में आ गयी और वहाँ के सेवक के पुकारने पर उन्होंने कहा कि मैं कल आऊँगा। घर जाकर रातोरात रामचंद्रिका की रचना की और दूसरे दिन गोस्वामीजी के पास आये। दोनों खूब दिल खोलकर मिले। आनंद आया।

एक बार आदिल शाही राज्य के थानाध्यक्ष दत्तात्रेय नाम के ब्राह्मण गोस्वामीजी के पास आये। उनके प्रसाद माँगने पर गोस्वामीजी ने अपनी हस्तलिखित दोहावली रामायण की पोथी दे दी। उन दिनों जिस पर विपत्ति आती, वही गोस्वामीजी के पास आता और गोस्वामीजी उसकी रक्षा करते। नीमसार के वनखण्डीजी के पास तीर्थयात्रा करता हुआ एक प्रेत आया। गोस्वामीजी के दर्शन मात्र से ही वह प्रेत योनि से छूट गया और दिव्य रूप धारण करके भगवान के धाम में चला गया। वनखण्डीजी की प्रार्थना से गोस्वामीजी ने तीर्थयात्रा की। अयोध्या में पहुँचकर उन्होंने गायक को रामगीतावली दे दी। वहाँ से वे अनेकों तीर्थों में गये, कहीं दुःखियों की रक्षा करते, कहीं सत्संग से साधुओं को आनंदित करते, कहीं भगवान की कथा कहते और कहीं प्रेम में मग्न होकर नाचने लगते। उस यात्रा में गोस्वामीजी ने कितने लोगों का लौकिक, पारलौकिक और परमार्थिक कल्याणसाधन किया, यह वर्णनातीत है।

नीमसार पहुँचकर गोस्वामीजी ने वनखण्डीजीकी इच्छा के अनुसार सब तीर्थस्थानों को ढूँढ़ निकाला और उनकी स्थापना की। उस समय संवत् १६४९ था। वहाँ से अनेक स्थानों में होते हुए वृन्दावन पहुँचे। वहाँ रामघाट पर ठहरे। चारों ओर धूम मच गयी। लोग दर्शन के लिए आने लगे। गोस्वामीजी नाभास्वामी के पास गये। उन्होंने बड़ा सम्मान किया। फिर उन्हीं के साथ भगवान का दर्शन करने के लिए श्रीमदनमोहनजी के मंदिर गये। तुलसीदासजी को राम-उपासक जानकर श्रीमदनमोहनजी ने धनुष-बाण धारण करके उन्हें रामरूप में दर्शन दिया।

अपने जन के कारणे श्रीकृष्ण भयो रघुनाथ।

ये तो सब जानते हैं श्री मदनमोहनजी श्री रघुनाथजी के रूप में प्रगट हुए। आज का विषय-विलास, विकार व द्वेष में फँसा हुआ व्यक्ति क्या जाने प्रभु-सामर्थ्य और संत के शुभ संकल्पों की महिमा। (क्रमशः)

गामा पहलवान की सफलता का रहस्य

❊ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ❊

घटित घटना है : प्रसिद्ध गामा पहलवान, जिसका मूल नाम गुलाम हुसैन था, से पत्रकार जैका फ्रेड ने पूछा : ''आप एक हजार से भी ज्यादा कुश्तियाँ खेल चुके हैं। कसम खाने के लिए भी लोग दो-पाँच कुश्ती हार जाते हैं। आपने हजारों कुश्तियों में विजय पायी है और आज तक हारे नहीं हैं। आपकी इस विजय का रहस्य क्या है ?''

गुलाम हुसैन (गामा पहलवान) ने कहा : ''मैं किसी महिला की तरफ बुरी नज़र से नहीं देखता हूँ। मैं जब कुश्ती में उतरता हूँ तो गीतानायक श्रीकृष्ण का ध्यान करता हूँ और बल की प्रार्थना करता हूँ। इसीलिए हजारों कुश्तियों में मैं एक भी कुश्ती हारा नहीं हूँ, यह संयम और श्रीकृष्ण के ध्यान की महिमा है।''

ब्रह्मचर्य का पालन एवं भगवान का ध्यान... इन दोनों ने गामा पहलवान को विश्वविजयी बना दिया ! जिसके जीवन में संयम है, सदाचार है एवं ईश्वर-प्रीति है वह प्रत्येक क्षेत्र में सफल होता ही है इसमें संदेह नहीं है।

युवानों को चाहिए कि गामा पहलवान के जीवन से प्रेरणा लें एवं किसी भी स्त्री के प्रति कुदृष्टि न रखें। इसी प्रकार युवतियाँ भी किसी पुरुष के प्रति कुदृष्टि न रखें। यदि युवक-युवतियों ने इतना भी कर लिया तो पतन की खाई में गिरने से बच जायेंगे क्योंकि विकार पहले नेत्रों से ही घुसता है बाद में मन पर उसका प्रभाव पड़ता है। फिल्म के अश्लील दृश्य या उपन्यासों के अश्लील वाक्य मनुष्य के मन को विचलित कर देते हैं और वह भोगों में जा गिरता है। अतः सावधान !

मन को ऐसे ही दृश्य दिखायें कि मन भगवन्मय बने। ऐसा ही सत्साहित्य पढ़ें कि मन में ईश्वर-प्राप्ति के, ईश्वर-प्रीति के विचार आयें। किसी के भी प्रति कुदृष्टि न रखें। जैसे गामा पहलवान ने यह सूत्र अपनाया और सफल रहा वैसे ही यदि भारत का युवावर्ग यह सूत्र अपना ले तो हर क्षेत्र में सफल हो सकता है।

शाबाश, भारत के नौजवानो, शाबाश ! आगे बढ़ो... संयमी व सदाचारी बनो... भारत की गौरवमयी गरिमा को पुनः लौटा लाओ... विश्व में पुनः भारत की दिव्य संस्कृति की पताका फहराने दो...

संयम-सदाचार व भगवद्प्रीति से परिपूर्ण जीवन तुम्हें तो उन्नति के शिखर पर आरूढ़ करेगा ही, तुम्हारे देश की आन-बान और शान की रक्षा में भी सहायक होगा ! करोगे न हिम्मत ! 'युवाधन सुरक्षा अभियान' के तहत भारत के युवा आप तो चेतेंगे ही, औरों को भी दलदल में गिरने से बचायें... प्रयत्न करना कि भारत के हर युवक तक 'युवाधन सुरक्षा' की पुस्तकें (भाग १ व २) पहुँचें। सभी युवक-युवतियाँ ब्रह्मचर्य की महिमा को समझें, समझायें एवं जीवन को ओजस्वी-तेजस्वी बनायें।

भगवान व संतों का आशीर्वाद तुम्हारे साथ है।

बालक देश की संपत्ति हैं। ब्रह्मचर्य के नाश से उनका विनाश हो जाता है। अतः नवयुवकों को मादक द्रव्यों, गन्दे साहित्यों व गन्दी फिल्मों के द्वारा बर्बाद होने से बचायें। वे ही तो राष्ट्र के भावी कर्णधार हैं। युवक-युवतियाँ तेजस्वी हों, ब्रह्मचर्य की महिमा समझें इसके लिए हम सब लोगों का कर्त्तव्य है कि स्कूलों-कालेजों में विद्यार्थियों तक ब्रह्मचर्य पर लिखा गया साहित्य पहुँचायें। सरकार का यह नैतिक कर्त्तव्य है कि वह शिक्षा प्रदान कर ब्रह्मचर्य के विषय पर विद्यार्थियों को सावधान करे ताकि वे तेजस्वी बनें।

(आश्रम की पुस्तक 'यौवन सुरक्षा' से)

अधिक मास माहात्म्य

अधिक मास को 'मल मास' पापताप नाशक या 'पुरुषोत्तम मास' भी कहते हैं। चातुर्मास में इस मास को अधिक महत्त्वपूर्ण माना गया है। इसीलिए इस मास में प्रातः स्नान, दान, तप, नियमधर्म, पुण्यकर्म, व्रत-उपासना तथा निःस्वार्थ नाम जप, गुरुमंत्र जप का अधिक माहात्म्य तथा महत्त्व है। अधिक मास में शादी, दीक्षाग्रहण जैसे मंगल कार्य नहीं किये जाते।

पांडवों ने वनवास के दिनों में तीन बार अधिक मास में यथाशक्ति स्नान, दान आदि व्रत किये, नियम धर्मों का पालन किया और परमात्मा पुरुषोत्तम की भक्ति की जिसके फलस्वरूप अंततः उन्हें विजय प्राप्त हुई।

हैहय देश में दृढ़धन्वा राजा और उसकी सर्वगुण संपन्न रानी दोनों ने पूर्वजन्म में पुरुषोत्तम मास में बारिश में बैठकर उपवास किया था। जिसके फलस्वरूप उन्हें अगले जन्म में राजसुख की प्राप्ति हुई। ऐसी कथा आती है।

इस मास में आँवले और तिल का उबटन शरीर को मलकर स्नान करना और आँवले के पेड़ के नीचे भोजन करना यह भगवान श्री पुरुषोत्तम को अतिशय प्रिय है, स्वास्थ्यप्रद और प्रसन्नताप्रद है। यह व्रत करनेवाले लोग बहुत पुण्यवान हो जाते हैं।

प्राचीन काल में इंद्रलोक की एक अप्सरा, स्मितविलासिनी एक बार पृथ्वी पर कुरुक्षेत्र में क्रीड़ा करने आयी थी। उसने वहाँ के सुगंधित फुल चुनकर सुंदर हार बनाया और ध्यानस्थ दुर्वासा ऋषि के गले में डाला। दुर्वासा ऋषि ने उसे शाप दिया, कि तू पिशाचिनी होकर पृथ्वीलोक पर भटकती रहेगी। उस पर उसने क्षमायाचना की, तब दुर्वासा ऋषि ने उसे परिमार्जन बताया कि दूसरे किसी व्यक्ति द्वारा अधिक मास का पुण्य तुम्हें दान करने पर तुम्हारा उद्धार होगा और उसके बाद तुम पुनः इन्द्रलोक में जाओगी।

वह अप्सरा भटकते-भटकते दक्षिण दिशा में कुमारी क्षेत्र में गयी। वहाँ पर एक तपस्विनी थी, उसने अधिक मास में स्नान, दान जप, उपवास आदि बहुत सारे व्रत किये थे।

कृष्ण द्वादशी के दिन उस तपस्विनी को खाने के उद्देश्य से वह पिशाचिनी (अप्सरा) उसके नजदीक गयी, पर आश्चर्य ! उसके तप के तेज से वह तेजोमय हो गयी। उसने उस तपस्विनी के चरण पकड़कर आप-बीती बतायी। तब उस तपस्विनी ने अपना अधिक मास का सारा पुण्यफल उसे अर्पण कर दिया। उसी क्षण उस पिशाचिनी रूप अप्सरा का उद्धार हो गया।

इस प्रकार इस अधिक मास (पुरुषोत्तम मास) में जप-ध्यान करने से पुण्यमय आध्यात्मिक ओज-तेज की प्राप्ति होती है।

इस महीने के स्वामी पुरुषोत्तम भगवान हैं।

करीब ३५५ दिन का चान्द्रवर्ष एवं ३६५ दिन का सौर वर्ष इनका मेल बिठाने हेतु ऋषियों ने हर तीन साल के बाद अधिक मास का निर्माण किया। लेकिन इस महीने को कोई इतना महत्त्व न देने के कारण उसे वर्ज्य, त्याज्य मानने लगे। तब नाराज होकर इस मास के अधिष्ठाता देव भगवान पुरुषोत्तम की शरण गये तथा उनको प्रसन्न कर वरदान प्राप्त किया कि यह महीना पुण्य अर्जित करानेवाला तथा पापों का नाश करनेवाला होगा एवं पुरुषोत्तम मास के नाम से जाना जायेगा अर्थात इस मास में जप-तप-आराधना-उपासना करनेवालों के पापों के पहाड़ भी नाश हो जायेंगे।

इसलिए इस अधिक मास में दान-उपासना-जप-तप-यज्ञ-व्रत करने से अमिट पुण्य प्राप्त होता है।

इस महीने में दीपदान करते हैं। दीपदान से मनोकामनाएँ पूर्ण होती हैं। दुःख-शोक का नाश होता है। वंशदीप बढ़ता है। ऊँचा सान्निध्य मिलता है, आयु बढ़ती है।

दीन-दुःखी, साधु-संतों तथा गरीबों को अन्नदान करने से, भगवान व भगवद्प्राप्त महापुरुषों की षोडशोपचार से पूजा करने से हृदय की शांति मिलती है। बेसहारा-असहाय लोगों का आधार बनकर उनको उचित दिशा दिखाने व भोजन कराने से पुण्य राशि प्राप्त होती है।

उपवास, मौन, नामस्मरण, भगवद्दर्शन, संत-सान्निध्य आदि का प्रयत्नपूर्वक सेवन करने से इस मास में अनगिनत लाभ होते हैं।

मन को संयम की लगाम लगाकर निर्वासनिक बनाना, करकसर से जीना, इन्द्रियों को प्रयत्नपूर्वक सन्मार्ग पर चलाना, श्रद्धा में वृद्धि करना एवं संत-सद्गुरु को प्राप्त कर भवसागर से तरने का पुरुषार्थ करने के लिए इस पुरुषोत्तम मास का बड़ा महत्त्व है।

पुरुषोत्तम मास अर्थात अधिक मास में गौमाता की पूजा का भी अपना अलग स्थान है। गौदुग्ध, गौघृत, गौगोबर, गौमूत्र, गौदधी इस पंचगव्य का विशेष महत्त्व है।

*

इन्द्र का सुख क्या है ? अप्सराओं के नाच-गान में क्या सुख है ? अरे देवताओं पर भी आदेश चलाने का सुख क्या है ? जहाँ एक बार भीतर का सुख आया कि ये समस्त सुख फीके पड़ जाते हैं।

देवताओं पर हुक्म चलाकर बहिर्मुख हो जाओगे। देवता यदि आदेश न मानें तो द्वेष होगा। आत्मा के आनंद में तो राग-द्वेष के लिए स्थान ही नहीं। वहाँ तो न कोई देवता है और न ही कोई आज्ञा देनेवाला। वहाँ तो परमदेव के साथ एकरूप हो रहे हैं। द्वैत के परदे फट रहे हैं और अद्वैत का आविर्भाव हो रहा है।

(आश्रम की पुस्तक 'श्री गुरुगीता' से)

एकादशी माहात्म्य

[पद्मिनी (कमला) एकादशी : २८ सितम्बर २००१]

अर्जुन ने कहा : "हे भगवन् ! अब आप अधिक (मल) मास की शुक्ल पक्ष की एकादशी के विषय में बतायें, उसका नाम क्या है तथा व्रत की विधि क्या है ? इसमें किस देवता की पूजा की जाती है और इसके व्रत से क्या फल मिलता है ?"

श्रीकृष्ण बोले : "हे पार्थ ! अधिक मास की एकादशी अनेक पुण्यों को देने वाली है, उसका नाम पद्मिनी है। इस एकादशी के व्रत से मनुष्य विष्णुलोक को जाता है। यह अनेक पापों को नष्ट करने वाली तथा मुक्ति और भक्ति प्रदान करनेवाली है। इसके फल व गुणों को ध्यानपूर्वक सुनो : दशमी के दिन व्रत शुरू करना चाहिए। इस दिन काँसे के पात्र का किसी भी रूप में प्रयोग नहीं करना चाहिए तथा मांस, मसूर, कोदों, शहद, शाक और पराया अन्न, इन सब खाद्यों का त्याग करना चाहिए। इस दिन हविष्य भोजन करना चाहिए, नमक भी नहीं खाना चाहिए। दशमी की रात्रि को भूमि पर शयन करना चाहिए और ब्रह्मचर्यपूर्वक रहना चाहिए। एकादशी के दिन प्रातः नित्य क्रिया से निवृत्त होकर दातुन करनी चाहिए और बारह बार कुल्ला करके पुण्य क्षेत्र में स्नान करने चले जाना चाहिए। उस समय गोबर, मृत्तिका, तिल, कुश तथा आमलकी चूर्ण से विधि पूर्वक स्नान करना चाहिए। स्नान करने से पहले शरीर में मिट्टी लगाते हुए उसीसे प्रार्थना करनी चाहिए : "हे मृत्तिके ! मैं तुमको नमस्कार करता हूँ। तुम्हारे स्पर्श से मेरा शरीर पवित्र हो। समस्त औषधियों से पैदा हुई और पृथ्वी को पवित्र करनेवाली, तुम मुझे शुद्ध करो। ब्रह्मा के थूक से पैदा

होनेवाली ! तुम मेरे शरीर को छूकर मुझे पवित्र करो । हे शंख-चक्र-गदाधारी देवों के देव ! जगन्नाथ ! आप मुझे स्नान के लिए आज्ञा दीजिये ।''

इसके उपरान्त वरुण मंत्र को जपकर पवित्र तीर्थों के अभाव में उनका स्मरण करते हुए किसी तालाब में स्नान करना चाहिए । स्नान करने के पश्चात् स्वच्छ और सुन्दर वस्त्र धारण करके तथा संध्या, तर्पण करके मंदिर में जाकर भगवान की धूप, दीप, नैवेद्य, पुष्प, केसर आदि से पूजा करनी चाहिए । उसके उपरान्त भगवान के सम्मुख नृत्य गान आदि करें ।

उस दिन पतित तथा रजस्वला स्त्री का स्पर्श नहीं करना चाहिए । भक्तजनों के साथ भगवान के सामने पुराण की कथा सुननी चाहिए । अधिक मास की शुक्ल पक्ष की पद्मिनी एकादशी का व्रत निर्जल करना चाहिए ।

यदि मनुष्य में निराहार रहने की शक्ति न हो तो उसे जलपान या अल्पाहार से व्रत करना चाहिए। रात्रि में जागरण करके नाच और गान करके भगवान का स्मरण करते रहना चाहिए । प्रति पहर मनुष्य को भगवान या महादेवजी की पूजा करनी चाहिए ।

पहले पहर में भगवान को नारियल, दूसरे में बिल्वफल, तीसरे में सीताफल और चौथे में सुपारी, नारंगी अर्पण करना चाहिए । इससे पहले पहर में अग्नि होम का, दूसरे में वाजपेय यज्ञ का, तीसरे में अश्वमेध यज्ञ का और चौथे में राजसूय यज्ञ का फल मिलता है । इस व्रत से बढ़कर संसार में कोई यज्ञ, तप, दान या पुण्य नहीं है । एकादशी का व्रत करनेवाले मनुष्य को समस्त तीर्थों और यज्ञों का फल मिल जाता है ।

इस तरह से सूर्योदय तक जागरण करना चाहिए और स्नान करके ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिए । इस प्रकार जो मनुष्य विधिपूर्वक भगवान की पूजा तथा व्रत करते हैं, उनका जन्म सफल होता है और वे इस लोक में अनेक सुखों को भोगकर अन्त में भगवान विष्णु के परमधाम को जाते हैं । हे पार्थ ! मैंने तुम्हें एकादशी के व्रत का पूरा विधान बता दिया ।''

['पद्म पुराण' से]

सात्त्विक ऊर्जा द्वारा दैवीगुणों का विकास करता है पिरामिड

सनातन धर्म के मंदिरों की छत पर एक त्रिकोणीय आकृति बनी होती है । जिसे वास्तुशास्त्र एवं वैज्ञानिक भाषा में 'पिरामिड' कहते हैं । यह आकृति अपने-आपमें अद्भुत है । हमारे ऋषियों ने ब्रह्माण्ड के तत्त्वों का सूक्ष्म अध्ययन करके उनसे लाभ लेने के लिए अनेक प्रयोग किये । मंदिर के शिखर की पिरामिडीय आकृति उन्हीं प्रयोगों में से एक है ।

पिरामिड चार त्रिकोणों से बना होता है । ज्यामितीशास्त्र के अनुसार त्रिकोण एक स्थिर आकार है । अतः पिरामिड स्थिरता का प्रदाता है । पिरामिड के अन्दर बैठकर किया गया शुभ संकल्प दृढ़ होता है । कई प्रयोगों में यह देखा गया कि किसी बुरी आदत का शिकार व्यक्ति यदि पिरामिड में बैठकर उसे छोड़ने का संकल्प करे तो वह अपने संकल्प में सामान्य अवस्था की अपेक्षा कई गुना अधिक दृढ़ रहता है और उसकी बुरी आदत छूट जाती है ।

विशेषज्ञों का कहना है कि पिरामिड में कोई भी दूषित, खराब या बाधक तत्त्व टिकते नहीं हैं । अपनी विशेष आकृति के कारण यह केवल सात्त्विक ऊर्जा का ही संचय करता है । इसीलिए कुछ दिन भी पिरामिड में रहनेवाले व्यक्ति के दुर्गुण भाग जाते हैं ।

पिरामिड में किसी भी पदार्थ के मूल कण नष्ट नहीं होते इसलिए इसमें रखे हुए पदार्थ सड़ते-गलते नहीं हैं । मिश्र के पिरामिडों में हजारों वर्षों पहले रखे गये शव आज भी सुरक्षित हैं, यह उपरोक्त तथ्य का प्रत्यक्ष प्रमाण है ।

मिश्र के पिरामिड मृत शरीर को विक्षिप्त होने से

बचाने के लिए बनाये गये हैं। इनकी वर्गाकार आकृति पृथ्वी-तत्त्व का ही गुण संग्रह करती है जबकि मंदिरों के शिखर पर बने पिरामिड वर्गाकार के साथ-साथ तिकोने व गोलाकार आकृति के होने से पंच महाभूतों को सक्रिय करने के लिए बनाये गये हैं। इस प्रकार के सक्रिय (ऊर्जामय) वातावरण में भक्तों की भक्ति, क्रिया तथा ऊर्जाशक्ति का विकास होता है । दक्षिण भारत के मंदिरों के सामने अथवा चारों कोनों में पिरामिड आकृति के गोपुर इसीलिए बनाये गये हैं। ये गोपुर एवं शिखर इस प्रकार से बनाये गये हैं ताकि मंदिर में आने-जानेवाले भक्तों के चारों ओर 'कॉस्मिक एनर्जी' का विशाल एवं प्राकृतिक आवरण तैयार हो जाय।

अपनी विशेष आकृति से पाँचों तत्त्वों को सक्रिय करने के कारण पिरामिड शरीर को पृथ्वी-तत्त्व के साथ, मन को वायु तथा बुद्धि को आकाश-तत्त्व के साथ एकरूप होने के लिए आवश्यक वातावरण तैयार करते हैं।

पिरामिड किसी भी पदार्थ की सुषुप्त शक्ति को पुनः सक्रिय करने की क्षमता रखता है । फलतः यह शारीरिक, मानसिक एवं बौद्धिक क्षमताओं को विकसित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

पिरामिड 'ब्रह्माण्डीय ऊर्जा' जिसे विज्ञान 'कॉस्मिक ऐनर्जी' कहता है, उसे अवशोषित करता है। ब्रह्माण्ड स्वयं 'कॉस्मिक ऐनर्जी' का स्रोत है तथा पिरामिड अपनी अद्‌भुत आकृति के द्वारा इस ऊर्जा को आकर्षित कर अपने अन्दर के क्षेत्र में घनीभूत करता है । यह 'कॉस्मिक ऐनर्जी' पिरामिड के शिखरवाले नुकीले भाग पर आकर्षित होकर फिर धीरे-धीरे इसकी चारों भुजाओं से पृथ्वी पर उतरती है । यह क्रिया सतत चलती रहती है तथा इसका अद्वितीय लाभ इसके भीतर बैठे व्यक्ति या रखे हुए पदार्थ को मिलता है।

पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू के दिशा-निर्देशन में उनके कई आश्रमों में साधना के लिए पिरामिड बनाये गये हैं। मंत्रजप, प्राणायाम एवं ध्यान के द्वारा साधक के शरीर में एक प्रकार की विशेष सात्त्विक ऊर्जा उत्पन्न होती है। यह ऊर्जा उसके शरीर के विभिन्न भागों से वायुमण्डल में चली जाती है परन्तु पिरामिड ऊर्जा का संचय करता है। अपने भीतर की ऊर्जा को बाहर नहीं जाने देता तथा ब्रह्माण्ड की सात्त्विक ऊर्जा को आकर्षित करता है। फलतः साधक पूरे समय सात्त्विक ऊर्जा के बीच में रहता है।

आश्रम में बने पिरामिडों में साधक एक सप्ताह के लिए अन्दर ही रहता है। उसका खाना-पीना अन्दर ही पहुँचाने की व्यवस्था है। इस एक सप्ताह में पिरामिड के अन्दर बैठे साधक को अनेक दिव्य अनुभूतियाँ होती हैं। यदि उस साधक की पिरामिड में बैठने से पहले तथा पिरामिड से बाहर निकलने के बाद की शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक एवं बौद्धिक स्थिति का तुलनात्मक अध्ययन किया जाय तो कोई भी व्यक्ति पिरामिड के प्रभाव को प्रत्यक्ष देख सकता है।

पिरामिड द्वारा उत्पन्न ऊर्जा शरीर की नकारात्मक ऊर्जा को सकारात्मक ऊर्जा में बदल देती है जिसके कारण कई रोग भी ठीक हो जाते हैं। व्यक्ति के व्यवहार को परिवर्तित करने में भी यह प्रक्रिया चमत्कारिक साबित होती है। विशेषज्ञों ने तो परीक्षण के द्वारा यहाँ तक कह दिया कि पिरामिड के अन्दर कुछ दिन तक रहने से मांसाहारी पशु भी शाकाहारी बन सकता है।

इस प्रकार पिरामिड की सात्त्विक ऊर्जा का यदि साधना व आदर्श जीवन के निर्माण हेतु प्रयोग किया जाय तो आशातीत लाभ हो सकते हैं। हमारे ऋषियों का मंदिरों की छतों पर 'पिरामिड शिखर' बनाने का यही हेतु रहा है । हमें उनकी इस अनमोल देन का यथावत् लाभ उठाना चाहिए।

अधिकांश लोग यही समझते हैं कि पिरामिड मिश्र की देन है परन्तु यह सरासर गलत है। पिरामिड के बारे में हमारे ऋषियों ने मिश्र के लोगों से भी सूक्ष्म एवं गहन खोजें की हैं। मिश्र के लोगों ने पिरामिड को मात्र मृत शरीरों को सुरक्षित रखने के लिए बनाया जबकि हमारे ऋषियों ने इसे जीवित मानव की शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक एवं आध्यात्मिक उन्नति के लिए बनाया।

भारतीय संस्कृति विश्व की सबसे प्राचीन संस्कृति है तथा भारत के अति प्राचीन शिल्पग्रंथों एवं शिवस्वरोदय जैसे धार्मिक ग्रंथों में भी पिरामिड की जानकारी मिलती है। अतः हम कह सकते हैं कि पिरामिड मृत चमड़े की सुरक्षा करनेवाले मिश्रवासियों की नहीं अपितु जीवात्मा एवं परमात्मा के एकत्व का विज्ञान जाननेवाले भारतीय ऋषियों की देन हैं।

भोजन पात्र

भोजन शुद्ध, पौष्टिक, हितकर व सात्त्विक बनाने के लिए हम आहार व्यंजनों पर जितना ध्यान देते हैं उतना ही ध्यान हमें भोजन बनाने के बर्तनों पर भी देना आवश्यक है। भोजन बनाते समय हम हितकर आहार, द्रव्य उचित मात्रा में लेकर, यथायोग्य पदार्थों को एक साथ मिलाकर उन पर जब अग्निसंस्कार करते हैं तब वे जिस बर्तन में पकाये जा रहे हैं उस बर्तन के गुण अथवा दोष भी उस आहार द्रव्य में समाविष्ट हो जाते हैं। अतः भोजन किस प्रकार के बर्तनों में बनाना चाहिए अथवा किस प्रकार के बर्तनों में भोजन करना चाहिए इस पर भी शास्त्रों ने आदेश दिये हैं।

भोजन के समय खाने व पीने के पात्र अलग-अलग होने चाहिए। वे स्वच्छ, पवित्र व अखंड होने चाहिए। सोना, चाँदी, काँसा, पीतल, लोहा, काँच, पत्थर अथवा मिट्टी के बर्तनों में भोजन करने की पद्धति प्रचलित है। इसमें सुवर्णपात्र सर्वोत्तम तथा मिट्टी के पात्र हीनतम माने गये हैं। सोने के बाद चाँदी, काँसा, पीतल, लोहा और काँच के बर्तन क्रमशः हीन गुणवाले होते हैं।

काँसे के पात्र बुद्धिवर्धक, स्वाद अर्थात रुचि उत्पन्न करनेवाले तथा रक्तपित्त का निवारण करनेवाले होते हैं। अतः काँसे के पात्र में भोजन करना चाहिए। इससे बुद्धि का विकास होता है। जो व्यक्ति रक्तपित्तजन्य विकारों से ग्रस्त हैं अथवा उष्ण प्रकृतिवाले हैं उनके लिए भी काँसे के पात्र हितकर हैं। अम्लपित्त, रक्तपित्त, त्वचाविकार, यकृत तथा हृदयविकार से पीड़ित व्यक्तियों के लिए भी काँसे के पात्र स्वास्थ्यप्रद हैं। इससे पित्त का शमन व रक्त की शुद्धि होती है।

लोहे की कढ़ाई में सब्जी बनाना तथा लोहे के तवे पर रोटी सेकना हितकारी है परन्तु लोहे के बर्तन में भोजन नहीं करना चाहिए इससे बुद्धि का नाश होता है। स्टील के बर्तन में बुद्धिनाश का दोष नहीं माना जाता। सुवर्ण, काँसा, कलई किया हुआ पीतल का बर्तन हितकारी है। पेय पदार्थ चाँदी के बर्तन में लेना हितकारी है लेकिन लस्सी आदि खट्टे पदार्थ न लें। एल्यूमिनियम के बर्तनों का उपयोग कदापि न करें।

केला, पलाश अथवा बड़ के पत्र रुचि उत्पन्न करनेवाले तथा विषदोष का नाश करनेवाले तथा अग्नि को प्रदीप्त करनेवाले होते हैं। अतः इनका उपयोग भी हितावह है।

पानी पीने के पात्र के विषय में भावप्रकाश ग्रंथ में लिखा है।

जलपात्रं तु ताम्रस्य तदभावे मृदो हितम्।
पवित्रं शीतलं पात्रं रचितं स्फटिकेन यत्।
काचेन रचितं तद्वत् तथा वैडूर्यसम्भवम्।

- भावप्रकाश, पूर्वखंड,४

अर्थात पानी पीने के लिए ताँबा, स्फटिक अथवा काँच-पात्र का उपयोग करना चाहिए। सम्भव हो तो वैडूर्यरत्नजड़ित पात्र का उपयोग करें। ताँबा तथा मिट्टी के जलपात्र पवित्र व शीतल होते हैं। टूटे-फूटे बर्तन से अथवा अंजलि से पानी नहीं पीना चाहिए।

[*साँईं श्री लीलाशाहजी उपचार केन्द्र, सूरत।*]

सेवाधारियों एवं सदस्यों के लिए विशेष सूचना

(१) कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी प्रकार की नगद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अतः अपनी राशि मनीऑर्डर या ड्राफ्ट द्वारा ही भेजने की कृपा करें।

(२) 'ऋषि प्रसाद' के नये सदस्यों को सूचित किया जाता है कि आपकी सदस्यता की शुरूआत पत्रिका की उपलब्धता के अनुसार कार्यालय द्वारा निर्धारित की जायेगी।

प्र. गुरुजी ! एकाग्रता कैसे बढ़े ?

उ. एकाग्रता कोई बच्चों का खेल नहीं है। सब योग एकाग्रता के लिए हैं। जितना वातावरण खुला और शांत, जितना निश्चित समय, निश्चित आसन और निश्चित विधि होती है उतनी एकाग्रता बढ़ती है।

शरीर स्वस्थ रहे एवं एकाग्रता साध सकें इसके लिए पहले ८-१० अनुलोम-विलोम प्राणायाम करने चाहिए। फिर नासाग्र दृष्टि रखकर धीरे-धीरे श्वास को निहारें इससे धीरे-धीरे श्वास की गति मंद होगी और एकाग्रता जल्दी हासिल होगी।

कभी-कभी किसी नदी, सरोवर अथवा सागर के किनारे चले जायें एवं उसकी लहरों को निहारें। निहारते-निहारते धीरे-धीरे वृत्तियाँ शांत होने लगेंगी, एकाग्रता बढ़ेगी। हो सके उतना अधिक मौन रखें। बोलने का अभ्यास कम रखेंगे तो वाणी कम खर्च होगी, शक्ति बचेगी वह शक्ति एकाग्रता में काम आयेगी।

शरीर और इन्द्रियों को लोलुप और बिखरा हुआ मत रखें। इतना परिश्रम न करें कि थक जायें और इतना आलस्य भी न करें कि तमोगुणी हो जायें, सोते रहें। शरीर थका हुआ होगा तो ध्यान के समय निद्रा, तंद्रा, लय और रसास्वाद आ जायेगा। उठेंगे तो लगेगा 'हाश ! ध्यान से बड़ी शांति मिली...' अंदर थकान थी, थकान उतरी तो शांति मिली।

प्रभात का ध्यान बड़ी मदद करता है। सुबह सूर्योदय से पूर्व स्नान करके पूर्वाभिमुख होकर बैठ जायें, गहरे श्वास लें और प्रणव (ॐ) का उच्चारण करें। निद्रा, तंद्रा, लय, रसास्वाद नहीं रहेगा और प्रभातकाल में महापुरुष ध्यान करते हैं उनके दिव्य परमाणुओं का भी लाभ मिलेगा।

शुरूआत में एकाग्रता नहीं भी हो लेकिन स्थान, आसन एवं समय निश्चित रखने से धीरे-धीरे लाभ होने लगेगा। पहले १० दिन तक २० मिनट मानसिक जप-स्मरण करते हुए ध्यान में बैठें कि : 'बीस मिनट तो बैठना ही है।' फिर धीरे-धीरे २५, ३०, ४०, ४५... मिनट बढ़ाते-बढ़ाते घण्टे तक पहुँच जायें। कुछ ही महीनों में एकाग्रता के अनुभव होने लगेंगे।

यह कोई बड़ी बात नहीं है लेकिन जैसा काम होता है उसके लिए वैसा समय और उत्साह चाहिए।

आहार-विहार पर भी संयम होना चाहिए। लहसुन-प्याज समझदारी से खानेवाले को तो फायदा करते हैं फिर भी तमस की प्रधानता प्राणों को नीचे ले आती है। ध्यान-भजन में हानि होती है।

एकाग्रता करने से पूर्व सत्साहित्य पढ़ें, जो बल दे, पवित्र निर्भयता दे और एकाग्रता के लिए उत्साह दे।

प्राणायाम, ध्यान करके ईश्वर की शरण हो जायें। नाड़ी शोधन के लिए कुण्डलिनी शक्ति अगर आसन परिवर्तन कराये, मुद्रायें कराये तो उसमें सहयोग करना चाहिए। प्राणशक्ति के उत्थान से मोटापा और शरीर में छुपे हुए दोष निकालने के लिए कभी विलक्षण आसन व मुद्राएँ होने लगेंगी। वह महामाया कुण्डलिनी जन्मों के छुपे विचित्र संस्कारों को उखाड़कर बाहर फेंकेगी। कभी हास्य, रुदन और भिन्न-भिन्न क्रिया-कलाप करवाकर साधक के तन-मन-मति को स्वच्छ कर देगी।

यह ध्यानयोग की साधना कुण्डलिनी जागृति की साधना है।

* सात्त्विक अन्न से सात्त्विक मन बनता है। सात्त्विक आहार जैसे, दूध, गाय का घी, मक्खन, बादाम, सूँठ, मिश्री आदि सात्त्विक चीजें ध्यान-भजन में विशेष मदद करती हैं। लहसुन, प्याज, चाय आदि व्यसनी-तामसी चीजें वीर्य (ऊर्जा) नाश करती है और ध्यान-भजन में हानि करती हैं।

खबर आयी है कि...

दिल्ली से खबर आयी है कि आश्रम द्वारा निर्मित संतकृपा नेत्रबिंदु के विलक्षण लाभ से प्रभावित होकर यहाँ के कुछ लोग बनावटी नेत्रबिंदु बनाकर नकली पैकिंग करके १० रुपये की कीमत में बेच रहे हैं।

अतः साधकों से अनुरोध है कि धीरज रखें और आश्रम द्वारा निर्मित नेत्रबिंदु ही निःशुल्क प्राप्त करें।

सत्साहित्य ने बदली जीवन की दिशा

मेरा जवानी का समय थोड़े ही दिनों में कुसंग से, पान-तम्बाकू-सिगरेट-शराब-कबाब आदि से भर गया। फरवरी '९६ से पूज्य बापू के सत्साहित्य पढ़ने का अवसर मिला। आश्रम से प्रकाशित 'जीवन विकास', 'नशे से सावधान' और 'यौवन सुरक्षा' पुस्तक मेरे लिये पहला प्रसाद था। बाद में 'ऋषि प्रसाद' मासिक पत्रिका का आजीवन सदस्य बना। नवम्बर '९८ में पटना में पूज्य बापू का सत्संग-सान्निध्य तथा प्रसाद प्राप्त हुआ। पूज्य बापू से मंत्रदीक्षा प्राप्त की। उनकी मीठी निगाहों ने व्यसन छोड़ने का संकल्प भी करवाया। धीरे-धीरे सब व्यसन छूट गये। इस प्रकार पूज्य बापू के सत्संग से मेरे जैसे हजारों-हजारों, लाखों-लाखों सत्संगियों का भला हुआ हैं। संत तुलसीदासजी ने कितना सुंदर कहा है :

एक घड़ी आधी घड़ी आधी में पुनि आध।
तुलसी संगत साध की हरे कोटि अपराध॥

यह पूज्यश्री का ही कृपा-प्रसाद है। उनके श्रीचरणों में नमन !

- श्रीनंद बोरा
शोणितपुर (असम).

*

ज्ञानी जो कहे सो औषध

मेरे लड़के को हृदय रोग हो गया था। मैंने पी. जी. आई. हॉस्पिटल, लखनऊ में डॉक्टर को दिखाया तो उन्होंने कहा कि हृदय का ऑपरेशन होगा जिसमें लगभग अस्सी हजार रुपये लगेंगे। मैंने उत्तर प्रदेश सरकार से ऑपरेशन हेतु अस्सी हजार रुपये का अनुदान भी बच्चे के नाम प्राप्त किया जो अस्पताल में जमा हो गया, परन्तु ऑपरेशन के लिए जाने पर डॉक्टरों ने कहा कि हृदय की एक नली बनी ही नहीं है अतः ऑपरेशन सम्भव ही नहीं है। हम हताश होकर लौट आये। दिनांक २७ अप्रैल २००० को लखनऊ में बापूजी का कार्यक्रम था। मैं बच्चे को पू. बापूजी के पास ले गया और प्रार्थना की कि बच्चा जीवित रहे। बापूजी ने पुदीना और लहसुन की चटनी खिलाने को कहा और कहा : 'बच्चा ठीक हो जायेगा।' तब से वही चटनी खिला रहा हूँ। बच्चा स्वस्थ है और ठीक हो गया है, उसके हृदय की नली भी बन गयी है। यह सब सद्गुरुदेव की कृपा ही है जो पुदीने और लहसुन की चटनी से हृदय की नली बन गयी है।

- रमेश चन्द्र कसौधन,
ग्रा. पोस्ट-कादीपुर, जि. सुलतानपुर (उ. प्र.).

*

वे नासमझ लोग होते हैं जो संतों के प्राकृतिक इलाज और उनके आशीर्वाद को द्वेषबुद्धि से मोड़-तोड़ कर बोलते हैं, वे समाज को गुमराह कर रहे हैं।

प्राचीन काल से वर और शाप देने में सक्षम कई संत महात्मा, सती, जती हुए हैं। किताबें पढ़कर इधर-उधर का चुराकर भाषण करनेवाली मति के लोग क्या जानें ?

जो ये बातें नहीं मानते और द्वेषवश कुछ-का-कुछ बोलते हैं उन पर तरस आता है। ईर्ष्या और द्वेष का भाषण करनेवाले को भगवान सद्बुद्धि दे। वे कथा को भाषण न बनायें। सत्पुरुषों के रास्ते चलें। संत ज्ञानेश्वर, संत नामदेव, समर्थ रामदास, रामकृष्ण परमहंस एवं और भी कई सत्पुरुष हुए हैं।

लोक कल्याणयुक्त हृदय से जो संकल्प उठे और सलाह मिले उसको द्वेषी स्वीकार नहीं कर सकते और नेक इंसान भूल नहीं सकते।

- संपादक

महत्त्वपूर्ण निवेदन : सदस्यों के डाक पते में परिवर्तन अगले अंक के बाद के अंक से कार्यान्वित होगा। जो सदस्य १०७वें अंक से अपना पता बदलवाना चाहते हैं, वे कृपया सितम्बर २००१ के अंत तक अपना नया पता भिजवा दें।

"ईसाई धर्म ग्रहण करलो, तनख्वाह बढ़ा दूँगा..."

अजमेर : २९ जुलाई। "तुम दोनों ईसाई धर्म ग्रहण कर लो, मैं तुम्हें आगे तनख्वाह दूँगा, वह भी बढ़ाकर दूँगा। तुम नीच जात के हो। हिन्दू धर्म में कोई तुम्हारा साथ देने को तैयार नहीं है। हम तुम्हें अपने धर्म में शामिल कर लेंगे।" सेन्ट एन्सलम चर्च के फादर सुसाईमेनेडिक की इन बातों तथा फादर अगेस्टिन की मार से आहत ईदगाह सब्जीमंडी, केसरगंज निवासी शक्ति कुमार ने अदालत में चर्च के फादर सुसाईमेनेडिक तथा फादर अगेस्टिन फ्रांसिस के खिलाफ फौज़दारी इस्तगासा दायर किया है।

शक्ति कुमार के वकील प्रतापकुमार वर्मा एवं अजय वर्मा के मार्फत परिवाद दायर कर बताया कि वह तथा उसकी दादी चर्च में सफाई व अन्य छोटे कार्य करते हैं। उन्हें एक-एक हजार रुपये मासिक तनख्वाह दी जाती है। शक्ति कुमार का कहना था कि दोनों को मई महीने से तनख्वाह नहीं दी गयी। वह तनख्वाह का हिसाब माँगने जब फादर अगेस्टिन तथा सुसाईमेनेडिक के पास गया तो उन्होंने रुपये-पैसे देने से मना कर दिया तथा जबरन कुछ कागजों पर लिखवाकर उससे हस्ताक्षर करवा लिये। उसने फिर रुपये माँगे तो फादर सुसाईमेनेडिक ने ईसाई धर्म ग्रहण करने के लिए उस पर दबाव डाला तथा उपर लिखी बातें की। जब उसने एतराज किया तो फादर अगेस्टिन ने उसके पेट पर लात मारी तथा उसे जाति सूचक शब्दों से अपमानित किया और झूठे मुकदमे में फँसाने की धमकी दी।

यह घटना २० अगस्त की बतायी गयी है। शक्ति कुमार ने अदालत से प्रार्थना की है कि उसके एवं उसकी दादी के वेतन के छह हजार रुपये दिलवाये जायें तथा दोनों फादर के खिलाफ कानूनी कार्यवाही की जाये।

[दैनिक नवज्योति समाचारपत्र, अजमेर ३०.८.२००१ से]

✲ संस्था समाचार ✲

मोडासा (गुज.) : दि. २७ से २९ जुलाई तक यहाँ त्रिदिवसीय गीता-भागवत सत्संग समारोह संपन्न हुआ। स्थानीय समिति व साधकों ने अल्प समय में समारोह की सारी तैयारियाँ पूर्ण की, शहर से दूर जंगल में मंगल का वातावरण बना दिया। चातुर्मास के श्रावण महीने में सद्गुरुदेव ने भक्ति, योग और ज्ञान की ऐसी गंगा बहायी कि सत्‌चित्-आनंदस्वरूप के अनुभव को छूकर आनेवाली अमृतमयी वाणी में अवगाहन कर मोडासा व आसपास के भक्तजन धन्य-धन्य हो गये। अंतिम दिन विशाल भंडारे का भी आयोजन हुआ। जिसमें आबाल, वृद्ध, सभी ने प्रसाद ग्रहण किया। चातुर्मास व श्रावण मास की उत्तम वेला में पूज्यश्री के आगमन से भक्तों में प्रसन्नता की लहर व्याप्त हो गयी। भक्तों ने साधना का सरल मार्ग पाया और बेजोड़ सत्संग का रसपान किया।

बड़ोदरा : दि. ४ और ५ अगस्त को पूर्वनिधारित कार्यक्रम के बजाय ३ अगस्त से ही रक्षाबंधन एवं पूर्णिमा दर्शन महोत्सव का शुभारंभ संत श्रीआसारामजी आश्रम, बील में हुआ।

जीवन में पर्व-त्यौहारों के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए पूज्यश्री ने कहा कि : **"भारतीय संस्कृति के छोटे-मोटे त्यौहार ही हमको प्रेम, उल्लास एवं आनंद से तृप्त रखते हैं। मनुष्य का अपना जीवन उत्सव जैसा ही है। कितने ही दुःख, भय और विघ्न आयें फिर भी मानव अपने भीतर का उत्साह बनाये रखे तो निश्चित ही उसका जीवन भी उत्सव बन सकता है।"**

कभी मूसलाधार बारिश तो कभी वर्षा की रिमझिम फुहार... तो कभी सूर्यदेव की आँख मिचौली... प्रकृति की इन अठखेलियों के बीच ज्ञान-भक्ति व योग-मार्ग के अनुभवनिष्ठ पूज्य बापूजी ने कीर्तन-ध्यान और सत्संग की त्रिवेणी में भक्तों को खूब गोते लगवाकर सराबोर किया। गुजरात व देश के विभिन्न प्रांतों से बड़ी संख्या में आये भक्तों ने नया उत्साह, उमंग व जीवन के लिए कुछ स्वर्णिम सूत्र पाये।

सूरत (गुज.) : दि. १० से १२ अगस्त। हर वर्ष की भाँति जन्माष्टमी महोत्सव संत श्री आसारामजी आश्रम, सूरत में बड़ी धूमधाम व आनंद-उल्लास से मनाया गया। उल्लेखनीय है कि पिछले कई वर्षों से इस उत्सव पर पूज्यश्री का पावन सान्निध्य प्राप्त करने का सौभाग्य सूरतवासियों को मिलता रहा है। सूरत तथा गुजरात के विभिन्न स्थानों के अलावा देश के अनेक प्रांतों से आये हजारों साधक-साधिकाओं तथा आम जनता ने भी इस स्वर्णिम अवसर का लाभ उठाया।

सूर्यपुत्री पवित्र सलिला तापी के तट पर आत्म-मस्ती

में रमण करनेवाले तत्त्ववेत्ता पूज्य बापूजी की शक्तिपात-वर्षा में भक्तों ने आत्ममस्ती की झलक पायी। अपनी अनुभवसंपन्न वाणी में पूज्यश्री ने कहा : **''अजर-अमर परमात्मा का अनुभव करना दुष्कर है फिर भी सच्चे अनुभवी ब्रह्मज्ञानी संत की शरण लेकर, सद्गुरु के निर्देशानुसार साधक साधना करें तो गुरुकृपा और अपने पुरुषार्थ के प्रयास से शरीर की मौत हो उससे पहले अवश्य ही उस अनंत आनंदस्वरूप परमात्मा का अनुभव करके जीते-जी मुक्त हो सकता है।''**

जन्माष्टमी के पावन पर्व पर मटकीफोड़ कार्यक्रम भी आयोजित हुआ। भक्तों ने पूज्यश्री को मनमोहक परिधान पहनाये।

मटकियाँ पूरे पंडाल में छीकों में लगाई गयी थी। रिमोट कन्ट्रोल की स्वीच दबाने पर एक साथ कई मटकियों का झूमना, घूमना, मक्खन-मिश्री का छिटकना और भक्तों का हर्षोल्लसित होकर मक्खन-मिश्री झेलना, खाना, खिलाना और उछलना... किसीके ललाट में, किसीके हाथ में तो किसी के होठ में मक्खनचोर की मीठी याद... रंगे हाथ-मुँह मनमोहन मक्खनचोर के मक्खन-मिश्री से।

मक्खन-मिश्री से रंगे हाथ, मुँह व होंठों को निहार-निहार कर ५२२६ वर्ष पूर्व के ग्वाल गोपियों का दृश्य साकार हो रहा था तापी तट पर।

छीकों में रखी ४-४ मटकियाँ और ऐसे कई छीके लगाये गये... मटकी फोड़ कार्यक्रम संपन्न हुआ। पूज्य बापूजी ने अपने पवित्र करकमलों से बैठे भक्तों के बीच दूर दूर तक मक्खन मिश्री की प्रसादी उछाली। उस समय भी चेहरे विलक्षण, भाव विलक्षण और आत्मिक आनंद तो विलक्षणों की विलक्षणता से छलक रहा था।

धनभागी हैं वे लोग जिन्होंने यह उत्सव निहारा और इसमें शामिल हुए। इसका वर्णन पढ़कर आप भी पावन हो रहे हैं।

दि. १२ अगस्त को जन्माष्टमी महोत्सव की पूर्णाहुति कर पूज्यश्री अमदावाद आश्रम पधारे।

अमदावाद : दि. १५ अगस्त को जाहिर सत्संग का आयोजन हुआ। स्वतंत्रता दिवस का संदेश देते हुए पूज्यश्री ने कहा : ''१५ अगस्त १९४७ को अंग्रेजों की बाह्य गुलामी तो दूर हुई लेकिन अंग्रेजी भाषा की, उनके विचारों की गुलामी तो हमारे दिल-दिमाग में घुसी हुई है। अतः अपनी वैदिक संस्कृति, अपने देश की जलवायु और रीति-रिवाजों के अनुसार स्वास्थ्य लाभ, सामाजिक जीवन और आत्मिक उन्नति करानेवाली भारत की महान संस्कृति का आदर करना चाहिये, लाभ लेना चाहिए।

बाह्य दिखावटी जीवन जीनेवाले बेचारे अमेरिका में ६३% लोग चैन की नींद नहीं ले सकते (वहाँ की अखबारों के अनुसार)। हम खुशनसीब हैं कि अभी भी भारतीय संस्कृति के अनुसार जीनेवाले चैन से सो सकते हैं। अंग्रेजी कल्चर का दिखावटी जीवन भीतर से खोखला कर देता है। संयमी, सदाचारी और साहसी भारतीय संस्कृति के सपूतों को अपनी मिली हुई आजादी को सावधानी से सँभाले रखना चाहिये। ॐ आनंद... ॐ शांति...''

उल्लेखनीय है कि पहले अंग्रेज ईस्ट इंडिया कंपनी के द्वारा भारत में घुसे और देश को गुलाम बनाया। इस समय धर्म-प्रचारक के रूप में अंग्रेजों का षड्यंत्र धर्मान्तरण के द्वारा देशवासियों को बाँट रहा है, लड़ा रहा है। उनकी पुरानी नीति ''फूट डालो और शासन करो'' जोर पकड़ रही है। हम सभी लेखकों को और भारत का हित चाहनेवालो को मिलकर उनकी मलीन मुरादें नाकामयाब करनी चाहिये। मिली हुई आजादी को बरकरार रखने में अपनी बल-बुद्धि और योग्यता का सदुपयोग करना चाहिये। कंधे-से-कंधा मिलाकर अपनी आजादी को बरकरार रखने के लिए धर्मान्तरण करानेवालों से देशवासियों को बचाने में सावधानीपूर्वक लगे रहना चाहिए।

उड़ीसा में बाढ़ पीड़ितों की सेवा...

आली और विन्जारपुर (उड़ीसा) क्षेत्र के ३६ गाँवों में ३० हजार से अधिक लोगों को नित्य निःशुल्क भोजन कराया जा रहा है। कटक, केन्द्रापाड़ा, जगतसिंहपुर जिलों एवं अन्य स्थानों में कुल १६८ निःशुल्क भोजन-केन्द्र कार्यरत हैं। भोजन-सेवा के साथ-साथ कपड़े वितरण का कार्य भी किया जा रहा है। महाँगा ब्लॉक के वासुदेवपुर, ओघा, भाकुडा, नाल वसन्त, उत्तर कुलसाही, उनीउभा पंचायत के बाढ़ पीड़ितों को चिवड़ा, बिस्कुट, मोमबत्ती और आवश्यक दवाइयाँ वितरित की जा रही हैं। नियाली ब्लॉक के कर्मदा, सियाल, राशिमिला, सगाड़ामिगी तथा पट्टामुडाई के बालीमाग, काशीयन्ता, बलदेव नगर, बदीश, मुन्डपड़ा, पालपढणा, श्री शामपुर, कृष्णदासपुर साईवेरा, सिद्धवाली इलाकों में २० हजार लोगों को सभी प्रकार की सहायता के साथ-साथ २५ स्थान पर निःशुल्क भोजन वितरित किया जा रहा है। जाजपुर और बरी के ३५ गाँवों में ३५ हजार लोगों के लिए निःशुल्क भोजन व इसके अतिरिक्त कपड़े आदि की व्यवस्था की गयी है तथा शीघ्र ही निःशुल्क आवास बनाकर देने की योजना है। आश्रम के साधक-साधिकायें व समिति के सेवादार मिलकर सेवाकार्यों में जुटे हैं।

गो-अमृत

गोझरण अर्क से अनगिनत लोगों को लाभ हो रहा है। उनके पत्र आश्रम में प्राप्त हो रहे हैं। एक प्रसिद्ध तांत्रिक अमेरिका गये थे। अन्न, जल लिये बिना कई सप्ताह उन्होंने प्रयोग दिखाये। फिर भारत आये। अन्न, जल न लेने से आँते चिपक गयी थी। ऑपरेशन आदि से भी फायदा नहीं हुआ। जयपुर के अपने तहसीलदार भक्त को उन्होंने बताया कि आश्रम के 'गोझरण अर्क' से मुझे बहुत फायदा हुआ है।

'रसायण चूर्ण' और 'गोझरण अर्क' से बेशुमार लोगों को आश्चर्यकारक लाभ हो रहा है। आश्रम में आ रहे उनके असंख्य पत्रों का स्थानाभाव के कारण यहाँ जिक्र नहीं कर पा रहे हैं। रसायन चूर्ण, गोझरण अर्क, संतकृपा चूर्ण से लाभ के पत्र आये हैं। अब शीतऋतु में अश्वगंधा व च्यवनप्राश से आपको लाभ होंगे। औरों को लाभान्वित करने का भी आनंद लीजिये।

३२ औषधियों के साथ उबाले गये आँवले और २५ अन्य औषधियाँ मिलाकर बनाया जाता है च्यवनप्राश। जिसके सेवन से पूज्य बापू को ६० वर्ष की उम्र में भी सिर में नये काले बाल आ रहे हैं और पहले से स्फूर्ति व कार्यक्षमता भी बढ़ रही है।

बाजारू च्यवनप्राश और विधिवत बनाये हुए च्यवनप्राश में कितना फासला !

जो समितियाँ निःस्वार्थ भाव से च्यवनप्राश की सेवा करना चाहती हैं वे वैद्यराज अमृतभाई, डॉ. कनक बहन, डॉ. अतुल भाई, वैद्य वंदना बहन से संपर्क करें अथवा च्यवनप्राश सेवा विभाग से पत्र व्यवहार करें। स्मरण रहे- सभी औषधियाँ पूर्ण मात्रा में और आँवले वीर्यवान बन गये हों तभी च्यवनप्राश बनाने में उपयोग करने चाहिए।

जिन समितियों में बनाने की क्षमता न हो वे साईं श्री लीलाशाहजी उपचार केन्द्र, सूरत से लेकर भक्तों तक पहुँचाने की सेवा करें।

साहित्य केन्द्रों के लिए खुशखबरी...

अब सेवाधारी साधक एवं समितियाँ अपने क्षेत्रों में साहित्य केन्द्र चलाने हेतु आश्रम द्वारा प्रकाशित साहित्य एवं अन्य सामग्री पर १०% छूट इन आश्रमों से भी प्राप्त कर सकती हैं : **आगरा** : (०५६२) ३७१७७०. **भोपाल** : (०७५५) ७४२५९९, ७४२५००. **गोधरा** : (०२६७२) ४७७७८. **इंदौर** : (०७३१) ४७८०३१. **जोधपुर** : (०२९१) ७४२५००. **लुधियाना** : (०१६१) ८४५४७३. **मुम्बई** : (०२२) ८७९०५८२. **नागपुर** : (०७१२) ६६७२६७. **नासिक** : (०२५३) ३४३५३६. **नई दिल्ली** : (०११) ५८१७२३८. **रतलाम** : (०७४१२) ८१२६३. **राजकोट** : (०२८१) ८३३५४. **सूरत** : (०२६१) २७७२२०१. **उल्हास नगर** : (०२५१) ५४२६९६. **अन्गुल** : (०६७६४) ३०५२१.

तो अब जो अमदावाद आश्रम से सामग्री नहीं मँगवा सकते वे नजदीक के आश्रम से संपर्क करके शीघ्र दैवीकार्य शुरू करें। ३१-१२-२००१ से पूर्व प्रत्येक तहसील स्तर के गाँव एवं शहरों के साहित्य केन्द्र अपने केन्द्र के नाम, पते, फोन नं. आदि अपने नजदीक के आश्रम से अनुमोदित करवाकर अमदावाद आश्रम में साहित्य विभाग को भेजें ताकि इन साहित्य केन्द्रों की सूची 'ऋषि प्रसाद' पत्रिका में भी प्रकाशित की जा सके।

आगामी सत्संग कार्यक्रम

(१) ६ और ७ सितम्बर, किशनगढ़ (राज.) में श्रद्धेय श्री नारायण साँई द्वारा। **(२) ९ से ११ सितम्बर, नागौर (राज.)** में पूज्य बापूजी द्वारा (प्रथम श्रद्धेय श्री नारायण साँई द्वारा). फोन : (०१५८२) ४२५८३, ४०१४६. **(३) १२ से १६ सितम्बर, गाँधी मैदान, जोधपुर (राज.)** में पूज्य बापूजी द्वारा। फोन : (०२९१) ७४२५००. (शिलान्यास : सिंधी समाज सभागृह एवं उच्चतर माध्यमिक शाला) **(४) १७ और १८ सितम्बर, हल्द्वानी (जि. नैनीताल)** में श्री सुरेशानंदजी द्वारा। **(५) १९ और २० सितम्बर, रुद्रपुर, जि. उधमसिंह नगर (उत्तरांचल)** में श्री सुरेशानंदजी द्वारा। **(६) २१ से २४ सितम्बर, बरेली (उ.प्र.)** में पूज्य बापूजी द्वारा (प्रथम श्री सुरेशानंदजी द्वारा). फोन : (०५८१) ४२८२१३, ४२०८४५. **(७) २५ से २७ सितम्बर, रामगंगा विहार, एम. आई. जी. इंजीनियरिंग कॉलेज के पास, मुरादाबाद (उ.प्र.)** में पूज्य बापूजी द्वारा (प्रथम श्री सुरेशानंदजी द्वारा) फोन : (०५९१) ४२४६९७, ४९४१२४, ४९०७६१. **(८) २९ सितम्बर से २ अक्टूबर, फरीदाबाद (हरियाणा)** में पूज्य बापूजी द्वारा। फोन : (०१२९) ५४८०६०८, ५२८६५६४, ५२६०९५५, ५२६६९१०, ५२८९४८०

पूर्णिमा दर्शन : २ अक्टूबर २००१ को फरीदाबाद (हरियाणा) में।

दूरस्थ संचालन (रिमोट कन्ट्रोल)
से एक साथ सैंकड़ो मटकियाँ
घूमी-झूमी... छलकाया
मक्खन-मिश्री... भक्तों ने
प्रसाद पाया... हाथों हाथ
पूज्य बापूजी ने फिर लुटाया।

भक्तों ने भावपूर्वक पूज्य बापू को अपने प्रिय परिधान पहनाये। विस्तृत विवरण पढ़ें पृष्ठ ३०-३१ पर...

मोडासा में आयोजित पूज्यश्री के सत्संगामृत का पान करते हुए भाग्यशाली भक्तजन।

संत श्री आसारामजी आश्रम, बील (बड़ौदा) में आयोजित पूर्णिमा दर्शन महोत्सव की झाँकी।

R.N.I. NO. 48873/91 REGISTERED. NO. GAMC/1132/2001. LICENSED TO POST WITHOUT PRE-PAYMENT LICENSE NO. 207. POSTING FROM AHMEDABAD 2-10 OF EVERY MONTH.
BYCULLA STG. WITHOUT PRE-PAYMENT LIC. NO. 236 REGD NO. TECH/47 833/MBI/2001 POSTING FROM MUMBAI 9 & 10th OF EVERY MONTH.
DELHI REGD. NO. DL-11513/2001 WITHOUT PRE-PAYMENT LIC. NO.-U(C) 232/2001 POSTING FROM DELHI 10-11 OF EVERY MONTH.